महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा

की पी-एच.डी. [हिन्दी] उपाधि हेतु शोध संक्षिप्त की

“समकालीन स्त्री विमर्श के आलोक में जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में प्रतिबिंबित स्त्री जीवन का अध्ययन”

***

*****

****

शोध-छात्र

वाघेला जितेन्द्र रतिलाल

***

*****

****

शोध-निर्देशक

डॉ० दीपेन्द्रसिंह जाडेजा

प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात)

२०२४

प्राक्कथन

साहित्य को समाज का दर्पण माना गया है। साहित्य को पढ़ते हुए उसमें वर्णित व्यक्ति हमारे आस-पास दिख जाता है। साहित्य में वर्णित समाज हमारे चारों तरफ दिखाई देता है। समाज और साहित्य को समझने की जिज्ञासा मुझ में बचपन से ही थी। स्नातक व परास्नातक में हिन्दी साहित्य को गंभीरता से पढ़ने व समझने का अवसर मिला। यही से साहित्य को अधिक गहराई से समझने की जिज्ञासा हुई। हिंदी साहित्य में शोध कार्य हेतु जब मैंने अपना मन बनाया उस वक्त मैंने महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्रोफेसर दीपेंद्रसिंह जाडेजा सर का संपर्क किया। उन्होंने हिंदी साहित्य की विविध विधाओं के बारे में बताया तथा हिंदी साहित्य में किस विषय में और किस विधा में शोध की आवश्यकता है यह भी बताया। मेरी रुचि के अनुसार शोध विषय चुनने के लिए कहा। इस संदर्भ में सर के साथ काफ़ी समय तक चर्चा हुई। मैंने सर से वार्तालाप करते हुए बताया कि मुझे हिंदी कविताएं बचपन से ही पढ़नी अच्छी लगती है। उस वक्त सर ने वर्तमान में हिंदी साहित्य के एक बड़े प्रतिष्ठित कवि का नाम सुझाया। उनका नाम जितेन्द्र श्रीवास्तव है जो वर्तमान में दिल्ली स्थित इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एवं अंतर्राष्ट्रीय विभाग के निर्देशक हैं। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव ने स्त्री जीवन पर आधारित अनेक कविताएं लिखी है। जाडेजा सर ने मुझे उनकी कविताओं को पढ़ने के लिए कहा। उनकी कविताओ को पढ़ने के बाद मैंने महसूस किया कि उनकी कविताओं में व्याप्त स्त्री जीवन की समस्याएं और उनके जीवन के उतार-चढ़ाव को कवि ने बखूबी अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया है। जो वर्तमान में प्रासंगिक है। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री संबंधित कविताएं और उनकी समस्याएं तथा अपने आसपास के सामाजिक जीवन में व्याप्त स्त्री जीवन को देखते हुए। मैंने कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री संबंधित कविताओं पर शोध कार्य करने का निश्चय किया। यही शोध कार्य की प्रेरक भाव भूमि है।

शोध प्रबंध एक साधना है। जो माता-पिता के आशीष भाई-बहनों और पत्नी के सहयोग, साहचर्य तथा उनके त्याग के बिना यह कार्य असंभव था। लेकिन हर पल उनका मेरे साथ खड़े रहना ही मेरी शक्ति है। और इस समर्पण का ही प्रतिफल यह शोध कार्य है। उनके त्याग और समर्पण के समक्ष 'आभार' शब्द बहुत बौना है। फिर भी मैं पूज्य माता-पिता एवं भाई-बहनों तथा पत्नी का सहृदय से आभार व्यक्त करता हूं।

सरल एवं उदार, मौलिक चिंतन से परिपूर्ण, सहृदय परम आदरणीय शोध निर्देशक प्रो.दीपेंद्रसिंह जाडेजा सर के मार्गदर्शन, स्नेह, वात्सल्य एवं अनुशासन से यह शोध कार्य की साधना संपन्न हो सकी। इसके लिए मैं सर के प्रति आत्मीय कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं। सर का कुशल मार्गदर्शन ही मेरी पूंजी है। सर का आत्मीय लगाव एवं सुझाव इस कार्य को करते रहने की निरंतर प्रेरणा देता रहा मुझे। जाडेजा सर का असीम स्नेह और आशीर्वाद मिलता रहा है और भविष्य में यह स्नेह एवं आशीर्वाद मिलता रहे ऐसी कामना करता हूं।

इसके साथ ही में आत्मीय आभार प्रकट करता हूं इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के प्रो. जितेन्द्र श्रीवास्तव सर का। जिनकी कविताओं पर शोध कार्य करने का अवसर मुझे मिला। समय-समय पर शोध कार्य में आने वाले कई प्रश्नों का उन्होंने समाधान किया और मुझे अपने कविता संग्रह उपलब्ध करवाए तथा शोध कार्य में मेरा अच्छे से मार्गदर्शन किया। साथ ही में आलोचक और संपादक अरुण होता, मृत्युंजय पाण्डे, कमलेश्वर वर्मा और सुचिता वर्मा जी का भी आभार व्यक्त करता हूं। जिन्होंने जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं पर आलोचना ग्रंथ एवं चयनित काव्य संग्रह लिखे हैं जिससे मुझे शोध कार्य के दौरान काफी लाभ मिला। जिस से मेरा शोध कार्य सरल हो गया। "समकालीन स्त्री विमर्श के आलोक में जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में प्रतिबिंबित स्त्री जीवन का अध्ययन"। इस विषय

में पूर्ववर्ती शोध कार्य अब तक नहीं हुआ। यह प्रथम मौलिक शोध कार्य है। हिंदी विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो.दक्षा मैडम का आभार व्यक्त करता हूं जिनके कार्यकाल के दौरान मेरे शोध कार्य के लिए पंजीकरण हुआ तथा वर्तमान में हिंदी विभागाध्यक्ष प्रो.कल्पना गवली मैडम का आभार व्यक्त करता हूं जिनके कार्यकाल में मैं अपना शोध प्रबंध प्रस्तुत करने जा रहा हूं। विभाग के अन्य गुरुजनों का समय-समय पर मार्गदर्शन एवं सहयोग मिलता रहा। अतः आदरणीय सभी गुरुजनों का भी में सहृदय से आभार व्यक्त करता हूं।

यह शोध कार्य मित्रों के सहयोग के बिना संभव ही नहीं था। जीवन की विषम परिस्थितियों में साथ देने वाले प्रिय मित्र चेतन, रणजीत सिंह, जुनैद, अश्विन तथा विभाग के साथियों में हेमलता, डॉ.ईश्वर भाई, शिव भाई, सागर, अतुल, सोहिलभाई, विजयभाई का विशेष सहयोग मिलता रहा। साथ ही विभाग के अन्य साथियों का सहयोग भी मिलता रहा। इस सहयोग के लिए मैं सभी मित्रों के प्रति आत्मीय आभार प्रकट करता हूं। पुस्तक तथा पुस्तकालय के बिना शोध कार्य की परिकल्पना नहीं की जा सकती। शोध कार्य में पुस्तकालय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतःमैं महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय के पुस्तकालय हंसा मेहता के कर्मचारीओ प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूं। जिन्होंने मुझे शोधकार्य हेतु दुर्लभ शोध सामग्री प्राप्त करने में मदद की, जिस से मेरा शोध कार्य पूर्ण हो सका। इसके अतिरिक्त में उन सभी विद्वानों के प्रति आभार प्रकट करता हूं। जिनकी कृतियों का किसी न किसी रूप में मैंने अपने इस शोध कार्य के लिए सहारा लिया। यह शोध कार्य महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय के प्रांगण में पूर्ण हुआ। इसके लिए मैं विश्वविद्यालय एवं विश्वविद्यालय परिवार के प्रति आभार व्यक्त करता हूं। अंततः मैं उन सभी व्यक्तियों के प्रति असीम आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सहायता, प्रेरणा एवं संबल प्रदान किया। जिनके

आशीर्वाद एवं शुभेच्छाओ के कारण ही आज इस शोध यात्रा को उसके अंतिम पड़ाव तक पहुँचा सका हूँ।

वाघेला जितेन्द्र रतिलाल

अनुक्रमणिका

- **प्रथम अध्याय:**

  जितेन्द्र श्रीवास्तव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

- **द्वितीय अध्याय:**

  समकालीन स्त्री विमर्श के विभिन्न पक्ष

- **तृतीय अध्याय:**

  जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं का लोकपक्ष और स्त्री जीवन

- **चतुर्थ अध्याय:**

  जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में अभिव्यक्त भारतीय दांपत्य जीवन

- **पंचम अध्याय:**

  जितेन्द्र श्रीवास्तव की बेटी केंद्रित कविताएं और स्त्री विमर्श का नया पक्ष

- **षष्ठ अध्याय:**

  जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री विषयक कविताओं की भाषा और उनका शिल्प

- **उपसंहार**
- **शोध प्रविधि**
- **शोध प्रबंध का उद्देश्य**
- **शोध प्रबंध की स्थापनाएं**
- **संदर्भ ग्रंथ सूची**

प्रथम अध्याय

"जितेन्द्र श्रीवास्तव का व्यक्तित्व और कृतित्व"

कवि जितेन्द्र का व्यक्तित्व बहु आयामी व्यक्तित्व है। वह एक अच्छे प्रोफेसर, कवि, आलोचक, संपादक और कहानीकार इत्यादि कई रूपों में सफलता अर्जित की हैं। इन सब रूपों के योग से निर्मित कवि जितेन्द्र का व्यक्तित्व एक विशिष्ट व्यक्तित्व बनता है। उन्हें अपने जीवन में कवि के रूप में सबसे ज्यादा सफलता मिली है। उनके साहित्य में सामान्य जनजीवन का यथार्थचित्रण प्राप्त होता है। वे अपने विचार तथा दायित्व से प्रतिबद्ध साहित्यकार है। किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण एवं विकास में पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक और व्यावसायिक जीवन का प्रभाव पड़ता है। व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया जन्म के साथ ही आरंभ हो जाती है। प्रारंभ में वह पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश से अभिन्न रूप से जुड़ा होता है और इसका प्रभाव उस व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व पर पड़ना स्वाभाविक है। युग का परिदृश्य और बोध सर्जक के चित में चेतन एवं अचेतन रूप में विद्यमान रहता है। कवि के साथ सहानुभूति के लिए पाठक का उसके निजी जीवन तथा उसके समय के वातावरण से परिचित होना आवश्यक है। निजी जीवन के अध्ययन से हम उसकी मानसिक परिस्थितियों को जान सकेगे। जिसके कारण वह काव्य की रचना में प्रेरित हुए। कविता रचना की प्रेरणा किसी भी कवि के लिए उसके जीवन की स्वभागत विशेषताएं एवं व्यक्तिगत प्रेरणा होती है। इस दृष्टि से अगर विचार किया जाए तो किसी कवि की कृति के अध्ययन से पूर्व उसके जीवन या व्यक्तित्व का अध्ययन करना उचित होगा। जितेन्द्र

श्रीवास्तव के जीवन का आरंभिक हिस्सा लगभग 14–15 वर्षों का जब एक तरह से चेतना का निर्माण होता है वह समय उन्होंने ठेठ गांव में गुजरा, लोगों के बीच गुजरा, प्रकृति के बीच गुजारा है। इन सब का उनकी चेतना पर बहुत गहरा असर पड़ा है और वह आज तक है। कवि सबसे पहले अपने जीवन से ही सिखाता है। कवि जिस परिवेश से आए हैं वहां उनकी मां थी, नानी थी उनकी बड़ी बहनें थी और इन सब के सानिध्य में वे बड़े हुए। कवि ने उनके सुख देखें, उनके दुख देखे, उनका संघर्ष देखा, उनकी जीवंता देखी, ईमानदारी देखी। कवि के विवाह के बाद उनके जीवन में उनकी पत्नी आई, दो बेटी आई। मां, नानी, बहनें, पत्नी और बेटियों के साथ रहते हुए उन्होंने महसूस किया कि स्त्रियां मूल रूप से बहुत ईमानदार होती है। बहुत संघर्षशील होती है। जीवता होती है उनमें। वे जल्दी हार नहीं मानती। कई बार पुरुषों को मुश्किलों से निजात वही दिलाती है। मुक्ति वही दिलाती है। कवि के जीवन और व्यक्तित्व के निर्माण में स्त्रियों का बड़ा योगदान रहा है। शायद यही कारण है कि कवि स्त्रियों के सुख और दुख को वाणी दे सके। कवि की पहचान के साथ जुड़ी कविता जिसका बार-बार जिक्र आता है–'सोनचिरई' जैसी कविता वह लिख इसीलिए पाए की स्त्री जीवन को उन्होंने बहुत ही करीब से देखा और महसूस किया है। कवि की बेटियों पर जो कविताएं हैं वह स्त्री जीवन का एक तरह से विस्तार है। बेटियों पर लिखी कविताओं को अगर देखे तो स्त्री विमर्श का एक नया स्वर वहां से निकलता है। अगर स्त्री विमर्श को जानना है तो सबसे पहले बेटियों को जानना जरूरी है। क्योंकि बेटियों को लेकर सब लोग बहुत संवेदनशील होते हैं। बेटियों की तरह स्त्री के प्रति संवेदनशील होकर ही हम स्त्री को और उनकी समस्याओं को अच्छे से जान सकेंगे।

कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव विशिष्ट प्रतिभा के धनी है। इन्होंने नौकरी प्राप्त करने के बाद विवाह किया। इन्होंने सदा माना है कि इनके मस्तिष्क में प्राथमिक चेतना का सूत्रपात परिवार के ही माध्यम से हुआ है। पारिवारिक वातावरण इनके लिखने के लिए सर्वदा ही सहायक रहा है। कवि के साहित्य सृजन के केंद्र में कविता एवं आलोचना रही है। उन्होंने उत्तर आधुनिकता, भूमंडलीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, विज्ञानयुग के इस माहौल में साहित्य और परिस्थितियों के मध्य समन्वय बनाते हुए आज के समाज को दर्पण दिखाया है। देश और समाज में साहित्य के प्रति एक नया नजरिया विकसित किया है। उनकी रचनाएं कल्पना मात्र नहीं है बल्कि समाज को यथार्थ के धरातल पर साधारण विषयों को भी असाधारण रूप में प्रस्तुत करती है।किसी भी युग की परिस्थितियों को रचनात्मक रूप प्रदान करने में उसे देश विशेष के व्यक्तियों एवं समाज की भागीदारी अनिवार्य है। कवि भी समाज का ही हिस्सा होता है और इस दिशा में अपनी युगीन परिस्थितियों को उजागर करने का महत्वपूर्ण कार्य अपनी रचनाओं के द्वारा करता है। रचना का महत्व भी तभी स्थापित होता है। जब उसके संदर्भ युग अनुकूल हो। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव का रचना संसार युग के विभिन्न संदर्भों को अपने साथ लिए चलता है। उनकी रचनाओं में लोक जीवन के विविध पक्ष मौजूद है जैसे कि स्त्री जीवन, किसान जीवन, मजदूर जीवन, निम्न मध्यम वर्गीय जीवन, दलित जीवन, गांव और शहर का जनजीवन, उत्तर आधुनिकता, भूमंडलीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, उदारीकरण, पूंजीवाद आदि।

द्वितीय अध्याय

"समकालीन स्त्री विमर्श के विभिन्न पक्ष"

प्रस्तुत अध्याय को मैंने दो भागों में विभक्त किया है। स्त्री विमर्श का भारतीय पक्ष और पाश्चात्य पक्ष। दोनों पक्षों का अध्ययन करने से पहले हम 'विमर्श' शब्द के अर्थ के बारे में जानेंगे। विमर्श का अर्थ है– विचारों का विनिमय करना। पौराणिक समय का 'शास्त्रार्थ' शब्द विमर्श के रूप में जाना जाने लगा है। इसके लिए अन्य शब्द बहस, बातचीत, संवाद भी प्रचलित है। इसी से संबंधित आजकल 'चर्चा' शब्द भी जोरों पर है। इसी तरह परीक्षा पर चर्चा, चाय पर चर्चा आदि। विमर्श शब्द के विचार, विनिमय अर्थ के सापेक्ष स्त्री विमर्श का अभिप्राय है– स्त्री संबंधित विचार, विनिमय, स्त्री को केंद्र में रखकर उसे समझने के लिए संवाद या फिर बहस। मानव जीवन से संबंधित सभी तत्वों का स्त्री जीवन पर पड़ने वाले सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव का मूल्यांकन करना और मनुष्य के रूप में उन्नत जीवनस्तर सुनिश्चित करना ही स्त्री विमर्श का ध्येय है। शारीरिक रूप से भिन्न होते हुए भी स्त्री एवं पुरुष की स्थिति एक सिक्के के दो पहलू की तरह है। दोनों एक दूसरे के बिना अस्तित्व विहीन। इनकी शारीरिक संरचनात्मक भिन्नता एक दूसरे को पूर्णता प्रदान करती है। भेदभाव, आधिपत्य और शोषण नहीं। मानव जीवन के उत्थान काल में इनमें से कोई भिन्नता नहीं थी। आधिपत्य भाव, स्वामीतत्व भाव तथा शोषण भी नहीं था। प्रकृति के बीच स्वच्छंदरूप से विचरण करता मनुष्य अंग ढकने की सोच भी विकसित नहीं हुई थी। तब तक दोनों समान ही थे।साथ में शिकार करना, भोजन करना, गुफाओं में रहना जीवन था। समय के अंतराल में मनुष्य सामाजिक प्राणी बना। सामाजिक जीवन के उन

शुरुआती दिनों में तो स्त्रियां सत्ता के केंद्र में थी। पशु चारण के लिए पुरुष समूह में यत्र–तत्र विचरण करता और स्त्रियां पूरे घर की देखभाल करती थी। जैसे-जैसे मनुष्य 'विकास' नामक शब्द से परिचित होता गया वह नैतिक दृष्टि से पतन की ओर बढ़ा। एक संगठित समाज की स्थापना, उत्पादन के साधनों पर पुरुषों द्वारा कब्जा करना, संपत्ति संचय की प्रवृत्ति, स्त्री–पुरुष में असमानता, आधिपत्य और शोषण की प्रवृत्ति को जन्म दिया। स्त्री पर आधिपत्य की प्रक्रिया में रूढ़िगत सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक मूल्य, आर्थिक बाधाओं और राजनीतिक संस्थाओं सहित अनेक कारणों का योगदान रहा है। सामाजिक ढांचे में परिवर्तन लाने के लिए समय-समय पर सामाजिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक और राजनीतिक आंदोलन होते रहे हैं। किन्तु इन आंदोलनों में कोई भी स्त्री की स्थिति में पूर्णता परिवर्तन लाने में सफल नहीं हो सका। स्त्री की दास्ता और असमानता के विरुद्ध स्त्रियों एवं समाज में चेतना का प्रसार निश्चित रूप से हुआ।

'विमर्श' शब्द वि+मृश धातु के योग से बना है। जिसका अर्थ है– वितर्क, विचार, विवेचना, समीक्षा, आलोचना, किसी तथ्य का अनुसंधान, करना। निष्कर्षत: यह कहां जा सकता है कि विमर्श वह विवेचन, समीक्षा, आलोचना तथा अनुसंधान है, जो किसी निश्चित परिप्रेक्ष्य में किसी समस्या, घटना, तथ्य या स्थिति के विभिन्न पहलुओं को विभिन्न दृष्टिकोण से जांचते परखते हुए प्राप्त निष्कर्ष है। विमर्श उद्देश्य युक्त होते हैं। अत:संबंधित तथ्यों के प्रति तटस्थता का होना अनिवार्य होता है। सामान्य रूप से स्त्री विमर्श का अर्थ स्त्रियों से संबंधित विषय में विचार करना है और चिंतन करना है। अर्थात इस तरह का साहित्य जिसमें स्त्रियों के हितों एवं विचारो को विमर्श के केंद्र में रखा जाए।

स्त्री विमर्श से मिलते हुए अर्थ में 'नारीवाद' शब्द प्रचलित है। जिसे अंग्रेजी में 'फेमिनिज्म' (feminism) भी कहां जाता है। जो 'स्त्री+वाद' से मिलकर निर्मित हुआ है। लैटिन में स्त्री को 'फेमिना' कहते हैं। इसी शब्द से 'फेमिनिज्म' स्त्रीवाद बना है। समलैंगिकतावादी और स्त्री अधिकारवादी दृष्टिकोण से इस शब्द का प्रयोग १९वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से होने लगा था। यहीं से यह शब्द स्त्री मुक्ति एवं स्त्री सशक्तिकरण से जुड़ता है। नारीवाद को एक व्यापक विषय के रूप में स्वीकारते है– 'नारीवाद का संबंध स्त्रियों से जुड़े सवालों से ही है। लेकिन नारीवाद इन्हीं सवालों तक सीमित नहीं है। नारीवादियों की चिंतन का घेरा पत्नी प्रताड़ना, फैमिली प्लानिंग एवं समान वेतन की सकरी परिभाषा में सिमटा हुआ नहीं है। इसमें से अनेक का विश्वास है कि संसार के हर मसले का संबंध स्त्रियों से है क्योंकि हर बात तथा हर घटना उन्हें पूर्ण रूप से प्रभावित करती है। वह स्त्री होने के साथ-साथ मनुष्य है, दुनिया की आधी आबादी है, इसलिए हर विषय उन से संबंध रखता है। नारीवादी सभी प्रकार की असमानता, दबाव तथा दमन हटाकर राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय रूप से समतामूलक मुक्त समाज की स्थापना करना चाहते हैं। अतः सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी मुद्दे उसके अपने हो जाते हैं। प्रत्येक मुद्दे पर स्त्रियों का एक दृष्टिकोण है और रहेगा और नारी चाहती है कि व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को उसको नारीवाद दृष्टिकोण से जोड़ा जाए।

स्त्री विमर्श एक प्रकार से व्यापक अवधारणा है। अतः इसे किसी निश्चित परिभाषा की सीमा में बांधना संभव नहीं है फिर भी विभिन्न विद्वानों ने इसके स्पष्टीकरण के लिए अनेक परिभाषाएं दी है, जिनसे हमें नारी विमर्श के स्वरूप को समझने में सहायता मिलती

है। नारी विमर्श के संबंध में कई विद्वानों के मत प्रस्तुत है– सुमन राजेश स्त्री विमर्श को स्त्री के आत्मबोध, आत्मविश्लेषण तथा आत्माभिव्यक्ति का संघर्ष बताती है, जो आंतरिक और बाहरी दोनों स्तरों पर समान रूप से घटित हुआ है।

भारतीय समाज का एक प्राचीन इतिहास रहा है यहां की सभ्यता प्राचीन सभ्यताओं में गिनी जाती है। इतिहास के विभिन्न चरणों में स्त्री की स्थिति में पर्याप्त भिन्नता रही है। प्रागैतिहासिक काल से आधुनिक काल तक पहुंचते-पहुंचते स्त्री ने अपने जीवन में उल्लेखनीय पड़ावों को पार किया है। इतिहास के विभिन्न कालो में स्त्री की स्थिति में उत्तरोत्तर परिवर्तनों का ऐतिहासिक मूल्यांकन इस प्रकार किया जा सकता है–

प्रागैतिहासिक काल भारतीय सभ्यता का शुरुआती काल रहा है। इस काल में स्त्री की स्थिति का मूल्यांकन प्राप्त पुरातत्व अवशेषों के आधार पर और आनुवंशिकता के आधार पर किया जा सकता है। इतिहासकारों के अनुसार तत्कालीन समाज मातृसत्तात्मक था। जिसमें स्त्री की स्थिति पुरुष के बराबर नहीं किन्तु उससे भी श्रेष्ठत्म थी। वह पूजनीय थी और परिवार के केंद्र बिंदु रूप में थी। सारी संपत्ति और परिवार के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार स्त्री के पास रहता था। समाज घुमक्कड़ जातियों के रूप में था। पशुपालन मुख्य व्यवसाय होने से पुरुष पशुओं के झुंड लेकर चरागाहों में भटकते तो स्त्रियां घर और बच्चों की देखभाल करती थीं। प्रागैतिहासिक काल में स्त्री की स्थिति सम्मानीय और जीवन के सभी पहलुओं के लिए विशेषाधिकार संपन्न थी।

वैदिक काल यानी भारतीय संस्कृति के उन्मेष काल में नारी की प्रतिष्ठा को पुरुष के समान ही स्वीकार किया गया है। नारी शिक्षा की व्यवस्था के परिणाम स्वरूप ही इस काल

में अनेक विदुषी स्त्रियों का प्राकट्य हुआ था। शिक्षा, ज्ञान और यज्ञ आदि विभिन्न क्षेत्रों में वह निर्विरोध स्वच्छंदतापूर्वक सम्मिलित होती थी और सम्मान पूर्वक आदर प्राप्त करती थी। इस युग में अनेक विदुषी स्त्रियां थी, जिन्होंने ऋग्वेद और अन्य वेदों की अनेक रचनाओं का प्रणयन किया था। लोपामुद्रा, गार्गी, अपाला, घोषा, मुद्गलानी, विश्ववारा आदि ऐसी ही पंडित स्त्रियां थी। समाज में वे पुरुषों की तरह ही आदरणीय और सम्मानीय थी। नारी जीवन के कुछ उज्जवल दृश्यों से यह नहीं समझा जाना चाहिए कि वैदिक काल में समग्र स्त्रियों की स्थिति सम्मानजनक थी। वैदिक समाज मुख्य रूप से पितृसत्तात्मक था। जिसमें पुत्रों को पुत्रियों से ज्यादा महत्व दिया गया था। पुत्र कामना, बहु विवाह, दासी प्रथा की शुरुआत यहीं से होती है। स्त्री अब दान की वस्तु मात्र बनने लगी थी। युद्ध में बंदी बनाकर लाई गई स्त्रियों से जब अंत:पुर भर जाता था तो रथ भर–भर कर स्त्रियां पुरोहितों एवं ऋषियों को दान में दे दी जाती थी। अतः वैदिक काल में स्त्री की दशा सामाजिक, धार्मिक दृष्टि से अच्छी थी किन्तु यह समस्त स्त्रियों के लिए नहीं । युद्ध में जीती गई स्त्रियां एक वस्तु मात्र थी दासी थी।

वैदिक काल में प्राप्त स्त्री की उच्च एवं सम्मानीय स्थिति उपनिषद काल में तीव्रता से पतन की ओर उन्मुक्त हुई थी। इस काल में वैदिक काल के समान ना तो सभी को शिक्षा ग्रहण करने के लिए गुरुकुल भेजा जाता था ना ही धर्म और समाज में उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। अपवादस्वरूप विदुषी स्त्रियों को छोड़कर ज्यादातर स्त्रियों को विवाहोपरांत गृहस्थ जीवन का निर्वाह करना पड़ता था। पुत्री का जन्म इस काल में चिंता का विषय बनना आरंभ हो गया। समाज में जाति–पाती, छुआछूत, बहुपत्नी प्रथा तथा बाल विवाह

इत्यादि कुरीतियों के जन्म लेने के कारण स्त्री की स्थिति बदतर होती चली गई। इस काल में उनका कोई अलग अस्तित्व नहीं था। वह केवल पुरुष की अनुगामिनी थी। पुरुष का अधिपत्य सर्वत्र था।

रामायण एवं महाभारत काल में महिलाओं की स्थिति विदुषियों के रूप में बहुत कम और तप, त्याग, नम्रता और पतिव्रता आदि गुणों से युक्त गृह–स्वामिनी के रूप में दिखती है। रामायण काल में धोबी के संदेह व्यक्त करने मात्र से सीता को गर्भावस्था की स्थिति में वनवास भेज देना तथा महाभारत काल में द्रोपदी को जुए में दांव पर लगा देना यह स्पष्ट करता है कि पत्नी वस्तु मात्र ही थी। पति अधिकारपूर्ण था और पत्नी के साथ मनचाहा व्यवहार कर सकता था। फिर भी उस काल में कन्याओं और स्त्रियों को घृणा भाव से नहीं देखा जाता था। उनके लिए स्वयंवर के द्वारा योग्य वर की तलाश की जाती थी। परन्तु उनके सामाजिक, आर्थिक और वैयक्तिक स्वतंत्रता पर अंकुश लगा दिए गए थे। इस काल की स्त्री पूज्य एवं आदरणीय होते हुए भी पुरुष से निम्न थी।

अन्य धर्मों में जैसे जैन एवं बौद्ध में स्त्री विषयक दृष्टिकोण में पर्याप्त विरोधाभास तथा अंतर्विरोध दिखाई देता है। जैन धर्म में मां के रूप में स्त्री को सम्मानीय स्थान दिया गया। वहीं दूसरी ओर पुरुषों के जीवन में मोक्ष प्राप्ति में रुकावट का कारण भी नारी को माना गया था। जैन धर्म के १९वें तीर्थकर मल्लीनाथ स्त्री होने के बावजूद स्त्री के प्रति उनका दृष्टिकोण घृणित रहा था। उन्होंने स्त्री जीवन को हमेशा ही व्यर्थ बताया। जैन धर्म एवं तत्कालीन हिंदू धर्म में स्त्रियों पर अनावश्यक नियंत्रण, पतिवर्ता होने का आरोपण, धार्मिक कर्मकांड तथा बाह्य–आडंबरों के प्रतिक्रिया स्वरूप स्त्रियों ने बौद्ध धर्म का आश्रय

ग्रहण किया था। आरंभ में महात्मा बुद्ध भी स्त्रियों को संघ में दीक्षित कराने के पक्ष में नहीं थे। महात्मा बुद्ध का कथन था कि–'नारी के प्रवेश से संघ की आयु क्षीण हो जाएगी। वह सहस्त्र वर्ष जीने के बदले ५०० वर्ष भी नहीं जिएगा।' उन्होंने सर्वप्रथम गौतमी बाद में अपनी पत्नी यशोधरा तथा गणिका आम्रपाली सहित अनेक उत्पीड़ित स्त्रियों को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था। इन बौद्ध भिक्षुणियों की जीवन गाथा का वर्णन 'थेरी गाथा'में किया गया हैं। महात्मा बुद्ध के निर्वाण के पश्चात बौद्ध धर्म का स्वरूप विकृत हो गया था। मठ बौद्ध भिक्षुणीओ के शोषण का केंद्र बन गया था। बाद में वज्रयानियों के समय में नारी का भोग्या रूप छोड़ कोई रूप सामने नहीं आया।

भारतीय इतिहास में स्वर्णयुग कहा जाने वाला मध्ययुग स्त्रियों के साथ सम्मानजनक व्यवस्था स्थापित न कर सका। सीमोन द बोउआर कहती है कि 'जिस सामंती प्रेम का वर्णन करते हुए साहित्य नहीं थकता वह वास्तव में औरत की कुंठा की कहानी है।' मध्यकाल के साहित्य से सिद्ध होता है कि इस काल में स्त्री का सौंदर्य जहां काव्य की शोभा बढ़ाने का कारण बना वहीं अनेक राजाओं के अनावश्यक रूप से आंतरिक एवं बाह्य युद्ध लड़ने का भी कारण बना। भारत पर मुसलमान शासकों के आक्रमण तथा मुगलों की शासन व्यवस्था के बाद यहां की स्त्रियों की दशा में दयनीय स्थिति पैदा हुई थी। मुसलमान आक्रमणकारियों से अपनी पुत्रियों की रक्षा हेतु बाल विवाह तथा पर्दाप्रथा जैसी कुरीतियों का प्रसार हुआ। हिंदू धर्म में सतीप्रथा चरम स्थिति को प्राप्त थी। इन सभी कुरीतियों से स्त्री–शिक्षा और स्वतंत्रता पूर्णता समाप्त हो गई थी।

आधुनिक युग में स्त्री की स्थिति के लिए क्रांतिकारी युग कहा जा सकता है। आधुनिक युग

की शुरुआत १९वीं शताब्दी के आरंभ से स्वीकार किया जा सकता है। देश की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में व्यापक बदलाव के साथ ही स्त्रियों की दशा में भी क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। ब्रिटिश हुकूमत ने भारत की प्रजातंत्रवादी व्यवस्था तथा आर्थिक व्यवस्था को पूरी तरह से तोड़ दिया था। लेकिन अंग्रेजी साहित्य और पाश्चात्य विचार धाराओं का सकारात्मक प्रभाव भारतीय समाज पर पड़ रहा था। पाश्चात्य प्रभाव के कारण कुरीतियों, अंधविश्वासों और रूढ़ियों के बंधन टूटे और स्त्रियों की स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त हुआ। ईसाई मिशनरियों ने भारतीय स्त्री जीवन में व्याप्त कुरीतियों की ओर भारतीय समाज सुधारकों का ध्यान केंद्रित किया था। समाज सुधारकों में अग्रणीय राजा राममोहन राय जैसे चिंतकों एवं समाज सुधारकों के सकारात्मक प्रयासों से विधवा विवाह का समर्थन तथा बाल विवाह, सती प्रथा का निषेध आदि कुरीतियां समाप्त हुई।

महाराष्ट्र के एक महान चिंतक महादेव गोविंद रानाडे ने नारी शिक्षा के लिए बहुत महत्वपूर्ण प्रयास किया था। स्त्री की दशा में सुधार लाने में दयानंद सरस्वती का भी योगदान महत्त्वपूर्ण है। दयानंद सरस्वती ने सन् 1875 में आर्य समाज की स्थापना के साथ लोगों को वैदिक युगीन व्यवस्था की ओर ध्यान आकृष्ट कराते हुए वैदिक युगीन स्त्री की सम्मानीय स्थिति को आदर्श के रूप में रखा और स्त्रियों की शिक्षा एवं विवाह के समानाधिकार पर बल दिया था और विधवाओं के पूर्णविवाह हेतु समाज में जागृति उत्पन्न की। स्वामी विवेकानंद ने रामकृष्ण मिशन की स्थापना द्वारा स्त्री की स्वतंत्रता के लिए समाज में जागरूकता फैलाई थी। इनके अतिरिक्त गोपाल कृष्ण गोखले, डॉ. के. कर्वे, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, पंडित रमाबाई सरस्वती आदि ने स्त्री की स्थिति को सुधारने

के लिए स्त्री शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया तथा सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई। स्त्रियों की चेतना को जागृत करने में थियोसॉफिकल सोसायटी की एनी बेसेंट एवं स्वामी विवेकानंद की शिष्या निवेदिता का योगदान भी अतुलनीय है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (INC) की प्रथम महिला अध्यक्ष का गौरव हासिल करने वाली सरोजिनी नायडू ने स्त्रियों के लिए चुनाव लड़ने एवं स्त्रियों के लिए मताधिकार की मांग उठाई।

स्त्री शिक्षा और नारी जागरण की दिशा में गांधी जी ने अतुलनीय योगदान दिया था। गांधीजी के आह्वान पर सन् 1919 ई. के असहयोग आंदोलन में महिलाओं ने बढ़–चढ़कर भाग लिया था और अपनी शक्ति से सबको आश्चर्यचकित कर दिया था। असहयोग आंदोलन ऐसा प्रथम देशव्यापी आंदोलन था। जिसमें गांधीजी के आह्वान पर पहली बार पुरुषों के साथ महिलाओं ने बढ़–चढ़कर भाग लिया था। गांधी जी स्वतंत्रता संघर्ष में विजय प्राप्ति के लिए स्त्रियों की भागीदारी अनिवार्य मानते थे। स्त्रियों के सहयोग के बिना स्वतंत्रता प्राप्ति उन्हें कठिन ही नहीं परन्तु असंभव लगने लगी थी। इसीलिए 1930 के नमक सत्याग्रह में उन्होंने खुले शब्दों में स्त्रियों को आंदोलन में शामिल करने हेतु आमंत्रित किया था। गांधीजी के आह्वान के प्रत्युत्तर में हजारों–लाखों स्त्रियां आंदोलन में कूद पड़ी थी। इस प्रकार सभी बंधनों एवं रूढ़ियों को त्याग कर स्त्रियों ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था और पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर साथ दिया था। आज़ादी के बाद भी महिलाओं ने देश के नवनिर्माण में अपना शत-प्रतिशत योगदान दिया था। संविधान निर्माण में हंसा बहन मेहता, रेणुका रे और दुर्गाबाई आदि ने स्वतंत्रता सेनानी महिलाओं ने भाग लिया था। संविधान ने भी स्त्री–पुरुष के भेदभाव को मिटा कर दोनों को

समान रूप से वैयक्तिक, शैक्षणिक, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकार प्रदान किए। संविधान द्वारा दिए गए यह अधिकार शताब्दियों से शोषित पीड़ित स्त्रियों को पुरुषों के समकक्ष समानता प्रदान करता है। हमारे संविधान ने भी राजनीति में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने तथा उनके व्यक्तित्व के विकास के लिए संसद में ३३%, गांव में पंचायत स्तर पर ५०% तथा सरकारी नौकरी में ३३% आरक्षण प्रदान किया गया है।

आज़ादी प्राप्ति के कई सालों के बीत जाने और क्रमशः अनेकानेक सुधारात्मक कदम उठाए जाने के बाद भी स्त्री अपने जीवन का निर्णय लेने के मामले में पूर्णरूप से आज भी आत्मनिर्भर नहीं है। अभी भी पुरुष वर्चस्व तथा रूढ़ीवादी परंपराओं की बेड़ियों ने उसे कहीं न कहीं जकड़ रखा है। इसीलिए स्त्री अपने व्यक्तित्व की मुक्ति के लिए आज भी संघर्षरत है।

नारी विमर्श की अवधारणा को पूर्णरूप समझने के लिए इससे संबंधित पश्चिम की विचारधाराओं और उसके इतिहास को भी समझना बहुत जरूरी है। अपने देश की स्त्री की तरह पाश्चात्य स्त्री भी स्वतंत्रता और समानता के अधिकारों से वंचित रही थी तथा पुरुषों के अधीन रहने को मजबूर थी। उन संपन्न देशों में भी उसकी स्थिति दोयम दर्जे के नागरिक के रूप में ही थी। पश्चिम की सामाजिक व्यवस्था में स्त्री को केवल विवाह और संतान उत्पत्ति का अधिकार था। वह भी पूर्णरूप से दासी थी। आज की स्त्री की तरह वह सार्वजनिक कार्यों में भाग नहीं ले सकती थी और न ही उसे मतदान देने का अधिकार प्राप्त था। किन्तु फ्रांस की राज्यक्रांति और इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति ने स्त्रियों की स्थिति में

परिवर्तन किया था। पश्चिम की स्त्रियां जो आज स्वतंत्र जीवन जी रही है, इसके लिए उन्हें एक समय कई प्रकार के संघर्ष करने पड़े थे। उन्होंने अपनी स्थिति सुधारने हेतु अनेक आंदोलन चलाए थे। मताधिकार प्राप्त करने की सफलता के बाद धीरे-धीरे अन्य अधिकार भी सुलभ होते गए और स्त्रियां राजनीति के क्षेत्र में भी बेधड़क उतरी थी। इस संदर्भ में सिमोन द बोउआर के विचार है– 'अंत में 'संयुक्त राष्ट्र संघ' ने 1945 तक आते-आते दुनिया की सारी स्त्रियों तथा पुरुषों के लिए समान अधिकार का ऐलान किया था। अधिकतर देशों में स्त्रियों को मताधिकार देकर राजनीतिक जीवन में उनको प्रवेश दिया।' इस तरह से अपने अधिकारों के प्रति जन सामान्य में चेतना प्रसार कराने के लिए ऐसी अनेक स्त्रियां आगे आयी। जिन्होंने साहित्य के माध्यम से कई आंदोलन को गति प्रदान की और स्त्रियों के लिए गरिमा युक्त परिस्थितियों निर्माण किया।

आधुनिक युग के हिंदी साहित्य में विशेषरूप से नई कविता एवं समकालीन कविता तक आते–आते स्त्री–विमर्श की अपनी एक अलग पहचान बन गई है। आज के साहित्यकार अपनी लेखनी द्वारा अपने जीवन में घटित यथार्थ को बड़े सहजरूप से अभिव्यक्त कर रहे है। महादेवी वर्मा, प्रभा खेतान, चित्रा मुद्गल, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा, मेहरून्निसा परवेज, जितेन्द्र श्रीवास्ताव, अनामिका, अनुराधा सिंह आदि। सभी ने अपने जीवन एवं समाज के संबंधों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। परन्तु सत्य तो यह है कि यदि स्त्री का दर्द अनुभव करना है या फिर जानना है तो आपको उनके जीवन को स्वयं जीना पड़ेगा। यदि ऐसा नहीं करते तो वे हकीकत न होकर केवल लोगों के मनोरंजन का साधन बनकर रह जाएगा।

तृतीय अध्याय

"जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं का लोक पक्ष और स्त्री जीवन"

'लोक साहित्य' की जड़े वैदिक साहित्य में मिलती है। ऋग्वेद में 'लोक' शब्द का प्रयोग स्थान तथा भुवन के अर्थ में प्राप्त होता है। भारत में 'आर्यों' के आगमन के बाद 'आर्य' और 'आर्येतर' जातियों के मध्य 'वेद' और 'वेदतर' स्थिति का आविर्भाव हुआ था। उस दशा में 'वेदतर' शब्द का प्रयोग 'लोक' के लिए होने लगा। यह 'लोक' शब्द वेद विरोधी अर्थ में लिया गया था। परन्तु आगे चलकर 'लोक' शब्द इस संकुचित सीमा से आगे उठ गया। बौद्ध धर्म के विकास के साथ मानव भावना का महत्व बढ़ने लगा और 'लोक' शब्द मानवीय उत्कृष्टताओं का बोधक बनता चला गया है।लोकगीतों में जनमानस के राग–विराग से पूर्णस्वर तथा लय के संगीतात्मक आवरण से लिपटी, भावानुभूतियों का सहज प्रवाह बहता है। जिसमें लोग जीवन के सभी रीति रिवाज, लोक परंपराएं, धार्मिक कार्य, विधि–विधान, मिथक, लोक कथाएं, आशाएं, उम्मीदें, हर्ष–विषाद और उल्लास सभी कुछ प्रतिबिंबित होता है। किसी भी देश के लोकगीत उस देश के जनता के हृदय के उद्गार ही होते हैं। वे उनकी भावनाओं के सच्चे प्रतीक होते हैं। यदि किसी भी देश की संस्कृति का अध्ययन करना हो तो सर्वप्रथम उनके लोकगीतों का अध्ययन करना उचित होगा। यह लोकगीत लोक मानस की वस्तु है। अतः उनमें जनता के हृदय भाव निर्हित होते है।

भारतीय लोक साहित्य के निर्माण में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का योगदान अधिक और विशिष्ट रहा है। लोकगीतों में सदियों से झड़ते स्त्री मन के दर्द, पीड़ा, प्रेम, आशा, आकांक्षा और प्रताड़ना आदि को साफ महसूस किया जा सकता है। जीवन की विभिन्न

परिस्थितियों में भी नारी के कंठ से उसके अपने भाव और अभाव के उद्‌गार प्रकट होते रहे हैं। यह लोकगीत समाज के घात–प्रतिघात का सच्चा रूप व्यक्त करते हैं।

भारत देश के अलग-अलग प्रदेशों में क्षेत्रीय बोली के अनुसार लोकगीतों के अत्यंत समृद्‌ध, विस्तृत और मजबूत परंपरा देखी जा सकती हैं। भिन्न–भिन्न अवसरों, रोजमर्रा के क्रियाकलापों, भिन्न–भिन्न भावों की अभिव्यक्ति के लिए, गाए जाने वाले लोकगीतों की विस्तृत तथा समृद्‌ध परंपरा की जड़ लोकमानस में गहरे तक धसी हुई हैं। इन्ही लोकगीतों के बहाने समाज की स्त्री मन के विविध भावोच्छवास अपनी संपूर्ण सरलता और वेदना के साथ प्रगट हुई है। स्त्री–सशक्तिकरण के तमाम तामझाम के बावजूद वह पीड़ित, पराधीन, अशिक्षित और शोषित है परन्तु संघर्षरत है। अपनी इन विपरीत परिस्थितियों से बाहर निकलने की उसकी छटपटाहट जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में साफ दिखती है। यह लोकगीत और कविताएं न सिर्फ उसकी दर्द और वेदना को बयां करते हैं परन्तु उसमें प्रतिरोध भी दर्ज हुआ है। कन्या जन्म पर परिवार की उपेक्षित प्रतिक्रिया पर स्त्री का गुबार इस लोकगीत में साफ दिखता है जहां वह कहती है कि यदि उसे पता होता उसके गर्भ में कन्या है तो वह उसे जन्म ही नहीं देती।

भाषा वैज्ञानिकों की दृष्टि से विद्‌वानों, शिक्षाविदों को उनके व्याकरण के लिए सम्मान भले ही दिया जाता हो। किन्तु प्रकृति के सानिध्य में बोली से लेकर भाषा तक के विकास का श्रेय आम जन को ही दिया जाना चाहिए। मानव सभ्यता के विकास के समय से ही मां तुल्य प्रकृति का प्रभाव समग्र मानव जीवन पर पड़ता रहा है। भारतीय समाज और लोकगीतों में जहां राजा और ईश्वर की लोक कथाएं प्राप्त होती है, वहीं सामान्य जनता का

विषाद, विद्रोह, प्रतिरोध, वेदना और लोक जीवन की विविध विसंगतियां भी दृष्टिगत होती है।कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति और जनजीवन को समझने के लिए लोकगीतों का अध्ययन करना एक अनिवार्य शर्त है। लोकगीत, लोक कहानियां और लोक कविताएं हमारे जीवन का महासमुद्र है। जिसमें भूत, भविष्य तथा वर्तमान सुरक्षित है। दूसरे शब्दों में लोकगीतों के रचनाकार भारतीय समाज की वह अशिक्षित आम जनता है जो समाज के सबसे निचले स्तर के रूप में चिन्हित की जाती है। जिसे हम आदिवासी, गवार, देहाती और आम आदमी कहते हैं। जो समाज की मुख्यधारा से कटा हुआ है, जिस तक शिक्षा और आधुनिक सभ्यता की किरणें बहुत कम पहुंचती है। फिर भी उसकी अपनी एक भाषा है, संस्कृति है, साहित्य है जिसे क्रमशः लोक भाषा, लोक संस्कृति और लोक साहित्य का नाम देते हैं। लोकगीतों की अधिकांश रचनाकार महिलाएं ही है। ऐसी महिलाएं जो सदियों से समाज की मुख्यधारा से कटी रही हैं, पठन-पाठन से वंचित रही। इन लोकगीतों में लोग जीवन का संपूर्ण जीवन भी चित्रित है। शिशु के प्रथम क्रंदन से लेकर जीवन के अंतिम संस्कार तक के भावचित्र लोकगीतों में मिलते हैं। भाई से मिलने को व्याकुल बहन की व्यथा कथा, स्त्रियों का आभूषण प्रेम, सास, ननद और सौतन के अत्याचारों से पीड़ित स्त्री की मनोदशा, कृषक परिवार की विपन्नता, वीरों की शौर्य कथा, मिलन और विरह के रंगारंग भाव इन लोकगीतों में मिलते हैं। इन लोकगीतों में स्त्रियों की अपनी भावनाएं, परंपराओं के प्रति क्षोभ, पितृसत्तात्मक जकड़न की छटपटाह और अपने निजी जीवन के सुख–दुख, आशा–आकांक्षा, वेदना विरह, मिलन की जीवंत अभिव्यक्तियां दिखाई देती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि भारतीय लोक जीवन का ऐसा कोई भी आयाम नहीं छूटता

जिस पर लोकगीतकारों की दृष्टि न पड़ी हो। सबसे बड़ी बात यह है कि इन लोकगीतकारों में व्यक्तिगत अहम की भावना न होकर लोक जीवन के प्रति एक प्रकार की प्रतिबद्धता पाई जाती हैं। इन प्राचीन लोकगीतों के रचयिता कौन हैं? आज तक कहा नहीं जा सकता। प्राचीन काल से ही लोकगीत, लोककाव्य, लोक संगीत और लोक नृत्य आम लोगों की संपत्ति रही है। स्त्री जीवन से संबंधित सभी भावनाएं पितृसत्तात्मक व्यवस्था में जकड़ी हुई स्त्री का रुदन कई रूपों और तेवरों में लोकगीतों में अभिव्यक्त हुआ है। जिसे हम समकालीन कवियों तथा कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में महसूस करते हैं। कहीं यह बेटी के जन्म पर विषाद पूर्ण वातावरण को व्यक्त करता है, कहीं बेटी द्वारा बेटे की अपेक्षा उससे भेदभाव पूर्ण व्यवहार के प्रतिरोध में व्यक्त हुआ है। कहीं विवाह के बाद मायका छोड़ने की मजबूरी की करुण विदाई में, तो कहीं पितृगृह जाने के उत्साह एवं उल्लास में तो कहीं सास और ननद की शिकायते में।

लोकगीतों की यह विशेषता है कि उनमें में अभिव्यक्तियां सीधी, सरल और यथार्थ होने के कारण अत्यंत मार्मिक है। तथा सीधे-सीधे ह्रदय को स्पर्श करने में समर्थ होती है। लोकगीतों में बेटी का अपने माता पिता को छोड़ने की मजबूरी है उससे वह दुखी है। अपना घर-परिवार गांव, गलियां सब कुछ सदा के लिए छोडती है। यह मोह को छोड़ना आसान नहीं है। नेहर छूटता जा रहा है। लोकगीतों का क्षेत्र बहुत व्यापक और बहुआयामी रहा है। रोजी रोटी के लिए लोग देश-विदेश भटकते हैं। घर, पत्नी को छोड़कर प्रिय परदेस चला गया है। इस बात की अभिव्यक्ति जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में बड़ी बारीकी से हुई है।

लोक कविताओ में विविध रूपों में स्त्री विमर्श की आदिम गुनगुनाहट सुनाई देती है। इसमें स्त्री-पुरुष संबंधों के विविध आयाम मौजूद है। बालिका के जन्म से लेकर मृत्यु तक उसके जीवन के विविध मोड़ सुख–दुख से लेकर हर्ष–विषाद, आशा–निराशा, वेदना, करुणा, प्रेम, आक्रोश, प्रतिरोध, उदात्त भावनाएं और सहज स्वाभाविक ढंग से सरल, सहज भाषा एवं शिल्प के साथ अपनी अस्मिता बनाए हुए हैं। इन लोकगीतों में हम भारतीय नारी की मर्यादा और उसकी विडंबनाओं की प्रतिछवियां देख सकते हैं।जो हमारे आधुनिक स्त्री विमर्श के लिए भी उपयोगी साबित हो सकती है।

कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री संबंधित कविताओं में 'लोक का चेहरा' दिखता है। उनकी कविताओं को पढ़ते हुए आंखों को यह सहज विश्वास नहीं होता कि उनके यहां लोक इतने गहरे रूप में तथा सशक्त रूप में उपस्थित है। उनको पढ़ते हुए बार-बार कवि केदारनाथ सिंह की याद आती हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि जितेन्द्र श्रीवास्तव केदारनाथ सिंह की परंपरा की धारा को आगे बढ़ाने वाले और उसमें बहुत कुछ नया जोड़ने वाले कवि है। यदि आप लोक का चेहरा देखना चाहते हैं और उससे मिलना चाहते हैं। उसे पढ़ना चाहते हैं, उसके साथ उसके हाट–बाजार, खेत–खलियान में घूमना चाहते हैं या उसके रसोई का स्वाद चखना चाहते हैं, तो आप जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं को एक बार पढ़ कर देखिए। कवि का लोक अतिसामान्य शब्द और सामान्य चीजों से बना है। जैसे लालटेन, पीठा, छाता, बथुआ साग, सामान्य लोग और सामान्य स्त्रियों से। लेकिन यह सामान्य चीजें कवि के हाथों में आते ही असामान्य दिखने लगती है और अपनी उपस्थिति दर्ज कराने लगती है। उन स्त्रियों की सारी जिंदगी जात पर गेहूं पिसते और गीत गाते हुए उस

पति के इंतजार में बीत जाती है जो विदेश चला गया है। लोक का विदेश कोई विकसित देश नहीं परंतु हमारे देश का एक छोटा सा गांव या शहर है। अपने बच्चों के चेहरों पर मुस्कान देखने के लिए यह लोग अपने मुल्क की मिट्टी–पानी और बोली–बानी, घर, गांव, यार, दोस्त, बीवी और बच्चों को छोड़ कर रोजी रोटी की खोज में मजदूरी करने चले जाते हैं।

जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में लोक जीवन के साथ समकालीन स्त्री विमर्श भी अपनी अस्मिता के साथ उपस्थित है। स्त्री पक्ष के बिना लोक पक्ष अधूरा है। स्त्री विमर्श के इस परिवेश में जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री संबंधी कविताएं उम्मीद की किरण की तरह दिखती है। जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में स्त्रियों का बहुआयामी रूप उभर कर हमारे सामने प्रस्तुत हुआ है। उनकी कविताओं में घास गढ़ती, ट्रेन में भीख मांगती, पहाड़ पर बोझा ढोती घर–परिवार, पति तथा बच्चों को संभालती तथा ऑफिस का काम करती तमाम तरह की औरतें मौजूद है। जितेन्द्र श्रीवास्तव स्त्री की पीड़ा, समस्या, तकलीफ और उसके मन की इच्छाओं को जानने के लिए स्त्री की जगह खड़े होकर सोचते हैं। जितेन्द्र श्रीवास्तव स्त्री को पुरुष की दृष्टि से नहीं परंतु एक स्त्री की नजर से देखते हैं। स्त्री लेखिकाएं भले ही पुरुष लेखन को स्वीकार न करें परंतु जितेन्द्र श्रीवास्तव जैसे महत्वपूर्ण कवियों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। देश के इतिहास में जब भी स्त्री की समस्या पर बात होगी, तब जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताएं अग्रिम पंक्ति में होगी। जैसे कि सोनचिरई, नमक हराम, पुकार, आभा चतुर्वेदी, लड़कियां, रामदुलारी, सिंदूर, परवीन बॉबी, बेटियां आदि।

हमारे लोक में स्त्रियों का एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा भी है जो घर में रात–दिन काम करती

रहती है। जिन्हें हम 'housewife' नाम से जानते हैं। यह स्त्रियां घने अंधेरे में लगभग 4 या 5 बजे आंखों में नींद तथा देह में थकान लेकर उठती है। सुबह-सुबह अपने पतियों के लिए चाय बनाती है। उनके लिए नहाने का पानी गर्म करती है। उनके कपड़े प्रेस करती है, जूते पॉलिश करती है और पति देह तोड़ते हुए। आंख मलते हुए उठते हैं बिस्तर से। इन स्त्रियों को काम से कभी छुट्टी नहीं मिलती। उल्टा छुट्टी के दिन इनका काम ओर भी बढ़ जाता है। समस्या यह है कि इन स्त्रियों के काम को काम में गिना भी नहीं जाता। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव स्त्रियों की समस्या पर सोचते हुए इस पहलू पर भी विचार करते हैं।

कवि जितेन्द्र के यहां लोक जीवन के चित्रण के पीछे गहरी रागात्मकता की वृत्ति है। प्रत्येक विषय के चित्रण का लोकजीवन की गहराई से जुड़ाव है। यह लोक तत्व और स्त्री जीवन कवि के काव्य में सर्वत्र उपस्थित है। लोक जीवन से जुड़ी वस्तुओं के माध्यम से कवि को बार-बार लोक का स्मरण हो जाता है। यही कवि के लोक जीवन में प्रगाढ़ प्रेम और आस्था का संकेत है। कवि के यहां लोक का विस्तार गांव से लेकर शहर तक मिलता है। मूल रूप में शहर भी छोटे-छोटे गांव के समूह से ही निर्मित हुआ है। शहर में भी लोक की उपस्थिति उनके काव्य में देख सकते हैं।जितेन्द्र श्रीवास्तव के यहां लोग जीवन में स्त्री जीवन की अलग ही छवि मिलती है। उन्मुक्त अधिकार बोध और स्वतंत्रता के साथ।कवि जितेन्द्र ने सोनचिरई, रामदुलारी, परवीन बॉबी, रमिया, संजना तिवारी, राय प्रवीण,आभा चतुर्वेदी जैसे अनेक स्त्री पात्र गढ़े है। इन सभी पात्रों के माध्यम से कवि ने स्त्री जीवन और अस्मिता के विविध आयामों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। स्त्री जीवन के संबंध में सोनचिरई, घास गढ़ती औरतें, कस्बे में प्रेमिका, रमिया, उम्र के साथ बदलती दुनिया, देखी

सुनी अनकही बात, नानी, स्त्रियां कहीं भी बचा लेती है पुरुषों को, जिसकी कुंडली भी मिल जाए दादी से, पानी, तुम जब चाहो, जनवरी के एक सुबह उठी तीन स्त्रियां, सपने में एक लड़की: सोनमछली, तुम कहां हो सुलेखा, लड़कियां, यह स्त्री जिसे देख रहे हैं आप, मैं इक चिड़िया हूं पापा, जितनी हंसी तुम्हारे होठों पर, बिल्कुल तुम्हारी तरह, ओ मेरी बेटियों याद रखना, जो विधाता स्त्री होता, किराएदार की तरह, वे उड़ती है गौरैयों की तरह, बेटियां, सपनों में परी की तरह, तुम देखना, कस्बे में प्रेमिका, फिर भी मन, रक्त में खुशी, नमक हराम, पुकार, नया विहान, एक नई स्त्री का आत्मकथ्य, मां का सुख, धीरे से कहती थी नानी जैसी इत्यादि महत्वपूर्ण कविताएं कवि ने स्त्री जीवन के संदर्भ में रची है। समकालीन परिवेश में यह कविताएं पाठक वर्ग द्वारा बहुत सराही गई है। विवेचक और आलोचकों द्वारा इन कविताओं का विविध संदर्भों में मूल्यांकन किया गया है। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा रचे गए यह पात्रों की स्वतंत्र छवि को स्वीकारने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इन पात्रों को स्वीकारने में यदि कहीं कोई आपत्ति है तो इसका सीधा सा अर्थ है कि स्त्री को पुरुष के समान नहीं समझना और पितृसत्ता का समर्थक होना है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पितृसत्तात्मक समाज की मानसिकता का बड़ा लंबा इतिहास रहा है जिसके अंतर्गत स्त्री स्वतंत्रता से युक्त छवि को निरंतर नकारा गया है। कवि ने अपनी कविताओं के अंतर्गत समाज में स्त्री संदर्भ में व्याप्त स्त्री विरोधी मानसिकता को लेकर स्पष्ट विरोध किया है।

स्त्री भी समाज का अभिन्न अंग है इसलिए स्त्री को आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में बराबरी की भागीदारी करने का पूरा अधिकार और

अवसर मिलना चाहिए। किन्तु पितृसत्ता उसके मूलभूत अधिकारों के आड़े आता है। संसार में सभी मनुष्य के जन्म की प्रक्रिया समान ही है। तो यह फिर स्त्री–पुरुष में अंतर क्यों? इस अंतर की निंदा सदैव महान व्यक्तियों और समाज सुधारकों ने की है। कवि ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से विरोध दर्ज कराया है। लोक जीवन में स्त्री सरोकारों को लेकर कवि अत्यंत ही सचेत है। इसके बावजूद स्त्री जीवन के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को लेकर कवि अत्यंत चिंतित है कि कहीं कोई कमी तो नहीं रह गई है। कवि कई बार अपने मन में जाकर इस बात को लेकर समीक्षा करते रहते हैं कि क्या आधुनिक युग में स्त्रियों को पूरे अधिकार प्राप्त हो रहे हैं? कवि स्त्रियों के अधिकारो की तथा उन्हें समझने की बात करते हैं। जोकि आज के स्त्री विरोधी परिवेश में निसंदेह सराहनीय है।

चतुर्थ अध्याय

"जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में अभिव्यक्त भारतीय दांपत्य जीवन"

विवाह संस्कार परिवार जीवन की आधारशिला है। विवाह से दांपत्य जीवन का आरंभ और विकास होता है। लड़की जब विवाह करने योग्य हो जाती है तो मां-बाप उसके लिए योग्य वर की खोज करते हैं और योग्य वर मिलने के बाद विवाह कर देते हैं। विवाह के बाद पति–पत्नी को ही दंपति कहां जाता है। भारतीय जीवन में विवाह बंधन को अनिवार्य माना गया है। विवाह के पहले एक स्त्री केवल एक पुत्री और बहन रहती है किन्तु विवाह के बाद उसे अलग-अलग प्रकार की भूमिकाएं निभानी पड़ती है जैसे कि पत्नी, बहू, मां, भाभी, देवरानी, जेठानी, चाची, मामी आदि। इन सब में पत्नी की भूमिका महत्वपूर्ण रहती है। वैदिक साहित्य में पत्नी को पति के घर में सर्वोपरि स्थान दिया गया है। इसका प्रमाण ऋग्वेद का

यह कथन है– "पत्नी ही घर है" कुदरत ने नारी को पुरुष के पूरक रूप में बनाया है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व अपूर्ण तथा अधूरा ही रहता है। विवाह इसी प्राकृतिक विधान का सामाजिक एक संस्कार है। पत्नी बनकर नारी पुरुष की अर्धांगिनी बनती है और अपने दांपत्य जीवन की सार्थकता पाती है। पति–पत्नी दोनों के आपसी सहयोग से दांपत्य जीवन का संचालन होता है। पति–पत्नी के अच्छे और बुरे व्यवहारिक संबंधों पर सफल और असफल दांपत्य जीवन का आधार रहता है। भारतीय समाज में स्त्री को धर्मपत्नी तथा अर्धांगिनी की संज्ञा दी गई है जिसका अर्थ है पुरुष का आधा भाग उसकी पत्नी है। अर्थात बिना विवाह के स्त्री–पुरुष का व्यक्तित्व अधूरा रहता है। विवाह के बाद ही एक पुरुष और एक स्त्री का व्यक्तित्व पूर्ण बनता है। रामायण ग्रंथ में पत्नी को पति की आत्मा माना गया है। महाभारत ग्रंथ के अनुसार वह पति का आधा भाग है, वह पत्नी का उत्तम मित्र है। इससे पता चलता है कि दांपत्य ही परिवार का मुख्य हेतु है। नारी और पुरुष के परस्पर आकर्षण ने साहचर्य की भावना को जन्म दिया और समाज में इसी सहचार्य को विवाह के रूप में स्थापित किया। भारतीय परिवार में दांपत्य संबंध को जितना महत्व दिया गया है उतना अन्य किसी संबंध को नहीं दिया गया। दांपत्य जीवन को सफल बनाने में नारी यानी पत्नी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

भगवान शिव की अर्धनारीश्वर की प्रतिमा यही साबित करती है कि स्त्री के बिना पुरुष और पुरुष के बिना स्त्री अधूरी है, अपूर्ण है। आधुनिक युग की मीरा कहीं जाने वाली महादेवी वर्मा ने नारी के पत्नी धर्म के बारे में अपने विचार इस तरह प्रस्तुत किए हैं–'नारी पति के सुख–दुख, आशा–निराशा, आचार– विचार और महत्वाकांक्षाओं को अपनाकर ही

सहधर्मिणी और अर्धांगिनी बनती है। नारी में परिस्थितियों के अनुकूल आत्मपरिवर्तन की एक विलक्षण शक्ति पायी जाती है। परिस्थितियों के अनुसार अपने बाह्य जीवन को ढाल लेने की जितनी सहज प्रवृत्ति नारी में है। अपने स्वभावगत गुण न छोड़ने की आंतरिक प्रेरणा उसमें कम नहीं। इसी से भारतीय नारी पुरुष से अधिक सतर्कता के साथ अपनी विशेषताओं की रक्षा कर सकती है। पति और पत्नी दांपत्य जीवन के अभिन्न अंग है। पति के बिना पत्नी अपूर्ण है और पत्नी के बिना पति आधा–अधूरा है। वैदिक युग में दांपत्य जीवन की पवित्रता का बड़ा ही महत्व था, महाभारत में भी यही क्रम है। इन सब बातों पर दंपतियों की आस्था थी तथा वे सुख पूर्वक दांपत्य जीवन का निर्वाहन करते थे, एक दूसरे का रक्षण करना और पोषण करते रहना तथा परस्पर सुख की कामना करते रहते थे। भारतीय जीवन मूल्यों ने दांपत्य जीवन को सुरक्षित रखने का अच्छा प्रयास किया है किंतु आधुनिक वैज्ञानिक युग में जहां जीवन मूल्यों में विघटन हो रहा है वही दांपत्य जीवन में परिवर्तन होना एक स्वाभाविक बात है। वर्तमान युग में सफल दांपत्य जीवन की अपेक्षा समाज में असफल दांपत्य जीवन के चित्र अधिक देखने को मिलते हैं। जैसे कि मोहन राकेश का नाटक 'आधे–अधूरे' इसका जीता जागता उदाहरण है।

दांपत्य जीवन स्त्री और पुरुष का समाज मान्य सम्मिलन है। भारतीय संस्कृति के दृष्टिकोण से विवाह एक धार्मिक संस्कार माना जाता रहा है। विवाह के बाद ही सही अर्थ में दांपत्य जीवन का आरंभ होता है। पति–पत्नी अपने सुखमय दांपत्य जीवन के सफल होने की कामना करते हैं। दांपत्य जीवन को सफल बनाने के लिए पति और पत्नी प्रयत्नशील भी रहते हैं। इसीलिए आज भी भारतीय समाज में दांपत्य जीवन को अन्य

किसी भी पारिवारिक संबंध से बहुत ज्यादा महत्व दिया गया है । क्योंकि दांपत्य जीवन ही परिवार की मुख्य आधारशिला है।

हमारे समाज में आज दांपत्य जीवन अपनी परंपरागत विचारधारा के साथ अपनी पवित्रता बनाए हुए हैं। भारतीय पति–पत्नी एक–दूसरे के प्रति समर्पित है। किन्तु कहीं कहीं पर आधुनिकता और पश्चिमी सभ्यता के कारण पति–पत्नी अपने दांपत्य जीवन से उब रहे हैं। आज आधुनिक भारतीय पत्नी अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व चाहती है। जब पुरुष उस पर अपना अधिकार जताता है तब उसका अहम भाव जागृत हो जाता है और इस प्रकार से पति–पत्नी के बीच अलगाव की स्थिति बढ़ रही है। एक ही घर में रहने के बावजूद पति–पत्नी एक दूसरे से काफी दूर हो रहे हैं। कई बार यह अंतर इतना बढ़ जाता है कि वे एक दूसरे से तलाक भी ले लेते हैं तलाक के बाद पुनर्विवाह भी कर लेते हैं। परंपरागत सभ्यता में काफी परिवर्तन हो रहा है। सभ्यता, मूल्य और संस्कृति के नए मापदंड समाज में स्थापित हो रहे हैं। आज भारतीय स्त्री के सामने सीता और सावित्री के आदर्श रखे जाते हैं, किन्तु आज की शिक्षित पत्नियां आंख मूंदकर पति की प्रत्यक्ष आज्ञा का पालन करने को तैयार नहीं है। वे पति की सहचारी तथा मित्र बनना चाहती हैं। अब उन्हें घर की चारदीवारी में बंद नहीं रखा जा सकता। भारतीय संस्कृति के जीवन मूल्यों को आधुनिकता की चुनौती ने इतना बदल दिया है कि दांपत्य संबंधों में काफी परिवर्तन आ गया है। यह बदलते हुए परिवेश का ही परिणाम है।

'बिल्कुल तुम्हारी तरह' यह कविता संग्रह जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपनी जीवनसंगिनी श्रीमती श्यामली जी को समर्पित किया है। इस काव्य संग्रह में जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपने

२२ साल के अधिक सुखमय दांपत्य जीवन को चित्रित किया है। जो कि एक आदर्श भारतीय दांपत्य जीवन को निरूपित करता है। इस काव्य संग्रह में कवि ने अपनी पत्नी प्रेम को बखूबी अभिव्यक्त किया है। पत्नी से पहली बार मिलना, विवाह के बाद व्यवसाय कार्य के लिए अलग-अलग जगहों पर जाना जैसे कि धारचूला, पिथौरागढ़ और बभनान। ऐसे में पत्नी की यादें और बच्चों की यादों को कवि ने अपनी कविताओं के द्वारा अभिव्यक्त किया है। पत्नी और बच्चों की यादों के सहारे किसी अनजान शहर में जीवन व्यतीत करना आसान नहीं है। 'बिल्कुल तुम्हारी तरह' काव्य संग्रह जितेन्द्र श्रीवास्तव की प्रेम कविताओं में शब्द अर्थ में पिघल जाता है और अर्थ शब्द का रूपाकार ग्रहण कर लेता है। उनकी कविता जिस ताकत से अपनी जगह बनाने में सफल है।उसका उत्स उसकी प्रेम संवेदना में ही है। दैहिक और निजी संदर्भों के स्तर पर पक कर यह प्रेम उनकी कविताओं में एक नई व्याप्ति प्राप्त करता है। प्रेम की व्याप्ति जितेन्द्र की कविताओं में न केवल स्त्री की आंतरिक दुनिया की वेदना तक फैली हुई है किन्तु इसकी जर्द में वह सारा समय और समाज दाखिल होता है जो किसी ना किसी रूप में कवि के निजी अनुभव का हिस्सा रह चुका है। यहां कवि खुलकर स्वीकार करता है कि वह प्रेम ही है जिसने उसे और उसकी संवेदना को अधिक मानवीय भावाकुल और निडर बनाया है। जितेन्द्र श्रीवास्तव की प्रेम कविताएं दांपत्य से प्रेम, वायु और धुप ग्रहण करती है। यहां लालसा से नहीं परन्तु यह साहचर्य से जन्मा प्रेम है। छोटी-छोटी स्मृतिओं के जरिए बुनी गई इन कविताओं की गहराई पाठकों से अलक्षित नहीं रह पाएगी। दांपत्य जीवन के प्रति गहरी आस्था से उपजी कविताएं हैं। इन कविताओं में अभिव्यक्त प्रेम, दुनिया से कटकर सार्थकता नहीं पाना

चाहता। वह इसी जीवन के सुख–दुख का हिस्सा है। एक ऐसे समय में जब विद्रोह के प्रचलित शब्द बेमान होने लगे, संघर्ष के सारे रूपों को आततायी सत्ता की संस्कृति संदेहास्पद बनाने लगे। तब प्रेम कविताओं की जरूरत बढ़ जाती है। कवियों के दायित्व भी बढ़ जाते हैं। यह सुखद है कि जितेन्द्र का कवि सरल निश्चल जीवन की खोज में हर उस जगह जाना चाहता है जहां प्रेम एक आदत की तरह हो। जीवन का सार हो। उनका प्रेम दैहिक दायरे से निकलकर अपने विस्तार में पूरी कायनात को समेट लेने को उत्सुक है। न केवल उत्सुक किन्तु कल्पना की असंभव हदों तक जाकर उस स्वप्न संसार को संभव कर लेना चाहता है। निश्चय ही जितेन्द्र श्रीवास्तव की दांपत्य जीवन पर आधारित यह प्रेम कविताएं जीवन को एक नया अर्थ देने वाली कविताएं है।

परिवर्तन जीवन का नियम है, जीवन में यह परिवर्तन निरंतर रहता है। आजादी के बाद भारतीय समाज भी परिवर्तित रूप में प्रस्तुत हुआ है। परंपरागत मूल्य, मान्यताएं बदलकर नए मापदंड स्थापित हुए हैं। जहां एक तरफ परंपरागत रूप से चल रहे संयुक्त परिवारों का विघटन हो रहा है। वहीं दूसरी तरफ सामाजिक और पारिवारिक संबंधों में परंपरागत रूप में भी काफी परिवर्तन आ रहा है। दांपत्य जीवन भी इस परिवर्तन से दूर नहीं रहा है। सफल दांपत्य जीवन के जो संस्कार पूर्वर्ती समाज में थे उनमें भी काफी परिवर्तन आ गया है। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव के कारण भारतीय दांपत्य जीवन भी अपनी वास्तविक पहचान खोकर नए चेहरे के साथ उभर कर हमारे सामने आया है। इस परिवर्तन के कारण परिवार और दांपत्य जीवन के मूल्य टूटने लगे हैं।

भारतीय परंपरागत धारणा और संस्कृति के अनुसार विवाह आत्माओं का एक पवित्र

मिलन है, जन्मों का संबंध तथा स्त्री–पुरुष का पवित्र बंधन माना जाता है। परंतु आज आधुनिक समाज में विवाह की यह परंपरागत मान्यताएं निरर्थक और अर्थहीन होती जा रही है। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से पति-पत्नी के विचारों में परिवर्तन आया है। दांपत्य जीवन के प्रति पति-पत्नी का दृष्टिकोण बदल रहा है।

एक पत्नी अपने पति को देवता के रूप में नहीं परंतु एक अच्छे जीवनसाथी के रूप में देखना चाहती है। आजादी के बाद मोहभंग होने के कारण पति-पत्नी के संबंधों में परिवर्तन हुआ है। एक ऐसा भी समय था जब विवाह धार्मिक पवित्र बंधन समझा जाता था हमारे यहां। एक पत्नी अपने पति के अनाचार सहकर पतिपारायण बनी रही थी। वर्तमान में स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सचेत है। वर्तमान में स्त्रियां कानूनी तरीके से सुरक्षित एवं आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र है। पत्नी की इस स्वतंत्र प्रियता और पति के अहम भाव के कारण दांपत्य जीवन के सामने प्रश्न चिन्ह लग गया है। पति पत्नी के लिए अब पौराणिक मूल्य टूटने लगे हैं। जैसे कि हिंदी साहित्य में मोहन राकेश के नाटक 'आधे–अधूरे' और मन्नू भंडारी के उपन्यास 'आपका बंटी' में दर्शाया गया है।

एक स्वस्थ दांपत्य जीवन एक सुखी परिवार की नींव है। वर्तमान समय में औद्योगिकरण, शहरीकरण आधुनिकरण और यांत्रिकता के कारण पति–पत्नी दोनों को अर्थाजन करना पड़ता है। पत्नी या पति का नौकरी के लिए बाहर जाना और अन्य पुरुष और स्त्री के संपर्क में आने से पति–पत्नी के बीच शक पैदा हो जाता है। वह दोनों एक दूसरे के लिए समय भी नहीं निकाल पाते और थक कर चूर हो जाते हैं। परिणाम स्वरुप पति–पत्नी के बीच अलगाव बढ़ता है। इसीलिए पति–पत्नी को एक दूसरे पर विश्वास करना और ईमानदार

रहना। आपस में प्यार से बातें करना और कुछ समय खुद के लिए निकालना बहुत जरूरी है।

आज की आधुनिक नारी भौतिक सुख और संपन्नता नहीं चाहती। एक वह भी समय था जब नारी गुड़िया बनकर पुरुष की पत्नी बन जाना पसंद करती थी। परंतु आज के आधुनिक नारी केवल गुड़िया नहीं बनना चाहती। आज वह सुख साधन और संपन्नता से अधिक एक पुरुष का भावात्मक और शारीरिक सहचार्य भी चाहती है। अर्थात आज की नारी पति नहीं एक अच्छा जीवन साथी, एक अच्छा दोस्त चाहती है जो उसे समझे, सम्मान दें, प्यार करें और उसकी भावनाओं को समझें।

पंचम अध्याय

"जितेन्द्र श्रीवास्तव की बेटी केंद्रित कविताएं और स्त्री विमर्श का नया पक्ष"

हिंदी कविता के 1000 वर्ष के इतिहास में जितेन्द्र श्रीवास्तव पहले कवि है। जिन्होंने बेटियों को ध्यान में रखकर पिछले 23 वर्षों में 23 कविताएं लिखी है। इतनी संख्या में और काल विस्तार में हिंदी के किसी भी दूसरे कवि की कविताएं बेटियों पर नहीं मिलती है। हिंदी कविता में स्त्री के बेटी रूप को अब तक विषय की व्यापकता तथा विविधता नहीं प्राप्त हुई थी। जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपने कवि जीवन के शुरुआती दिनों से लेकर आज तक निरंतर इस विषय पर कविताएं लिखी है। 1995 से लेकर 2018 के बीच 23 वर्षों में लिखी गई ये 23 कविताएं अपने भीतर पर्याप्त काल विस्तार को भी समेटती है। ये कविताएं किसी एक झटके में नहीं लिखी गई है। बल्कि आस्ते–आस्ते परिपक्व होती हुई

पाठकों के सामने आई है।

इन कविताओं की एक विशेषता ध्यान आकर्षित करती है कि इनमें कवि की अपनी बेटियों का जिक्र तो है ही, इनमें बेटी के प्रति सामान्य भाव बोध को भी पूरी संवेदना के साथ चित्रित किया गया है। जितेन्द्र श्रीवास्तव ऐसी कविताएं उस समय भी लिख रहे थे, जब वे स्वयं किसी बेटी के पिता नहीं बन पाए थे। इसीलिए उनके इस पक्ष के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह सब उनका महज व्यक्तिगत या पारिवारिक पक्ष है। उनकी कविताओं में बेटी की चिंता–चर्चा और उपस्थिति व्यक्तिगत पारिवारिकता से लेकर वैश्विक स्तर पर स्त्री के लिए की जा रही बहस से भी जुड़ती है। यह निष्कर्ष सही होगा कि बेटी केंद्रित उनकी कविताओं को बेटी के पिता के केवल भावुक बयान के रूप में देखा जाए।

संस्कृत साहित्य में यह छंद प्रसिद्ध है– 'काव्येषु नाटकम रम्य...'। इसमें कहां गया है कि काव्य (साहित्य) में नाटक रम्य होता है तथा नाटकों में सबसे रम्य हैं कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' में चौथा अंक सबसे रम्य है और उस अंक में भी चार श्लोक। ये चार श्लोक शकुंतला की विदाई से जुड़े हैं। उनमें ऋषि कण्व की व्याकुल भावनाओं का चित्रण है। उनमें ढेर सारी बातों के साथ कण्व यह भी कहते हैं कि मैंने शकुंतला को जन्म नहीं दिया है, केवल पाला पोसा है। फिर भी उसकी विदाई पर मेरी छाती फटी जा रही है। ऐसी परिस्थिति में गृहस्थों का क्या हाल होता होगा? जो बेटी को जन्म भी देते हैं, पालते–पोसते भी है और विदा भी करते हैं। कालिदास के इन छंदों को श्रेष्ठ मानने के बावजूद बेटी के बारे में कविता लिखने का प्रचलन नहीं हो सका। शायद यह कठिन विषय है। कालिदास के इन छंदों में एक संकेत यह भी है कि बेटी की चिंता करने के

लिए बेटी का बाप होना जरूरी नहीं है। और भले ही रसराज के रूप में श्रृंगार रस की प्रतिष्ठा है, मगर संस्कृत साहित्य की श्रेष्ठ कविता का दर्जा ऐसे छंदों को भी मिल सकता है जिनमें श्रृंगार रस नहीं है बल्कि वात्सल्य रस है। कालिदास के विपुल साहित्य में बेटी केंद्रित इन चार छंदों की प्रतिष्ठा संस्कृत आलोचना में कहावत की तरह यूं ही नहीं बन गई है। बेटी केंद्रित निराला की 'सरोज स्मृति' कविता को जो दुर्लभ प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है, उससे हम सब जानते हैं।

इस लिहाज से जितेन्द्र श्रीवास्तव की बेटियों से संबंधित कविताएं हिंदी कविता की एक बड़े अभाव को दूर करती है। उन्होंने योजना बनाकर बेटी केंद्रित कविताएं नहीं लिखि हैं। बल्कि उनके द्वारा लिखी गई कविताओं में यह भाव बोध पारिवारिक संवेदना के साथ घुल मिलकर व्यक्त हुआ है। उनकी ऐसी कई कविताएं हैं जिनका संदर्भ स्त्री है, मगर उस स्त्री का बुनियादी रूप उस कविता में बेटी का है। 'सोनचिरई' उनकी ऐसी ही एक कविता है, जिसका संदर्भ स्त्री है मगर बुनियाद में बेटी है। कहना अवांछित न होगा कि यह कविता उन्होंने तब लिखित जब वे किसी बेटी के पिता तो क्या विवाहित भी नहीं थे। 'सोनचिरई' 1995 में लिखी गई जितेन्द्र श्रीवास्तव की पहली कविता है, जिसमें बेटी और स्त्री की चिंता का घुला–मिला रूप है। 'पत्नि' के 'बांझ' होने के कलंक ने उसे मायके में टिकने न दिया। भावपूर्ण भाषा में कथात्मक तरीके से लिखी गई यह कविता मूलतः बेटी की चिंता की कविता है। इस कविता पर ध्यान दिया जाए कि जिस मां ने उसे जन्म दिया था उसने भी 'बांझ' मानकर सोनचिरई को जगह नहीं दी। आख्यानों के अनुसार सबकी मां धरती है। जिस ने सीता को आश्रय दिया था, बेटी मानकर। वह धरती मां भी सोनचिरई से कहती है

कि मैंने यदि तुम्हें जगह दी तो जैसी तुम 'बांझ' हो वैसे ही मैं बंजर हो जाऊंगी। यह कविता स्त्री की उपेक्षा का समाधान तो अंत में निकाल देती है। सोनचिरई से एक युवक विवाह कर लेता है और पूरी उम्र जीकर जब वह मरती है तब आसुओं से जार–जार उसके आठ बेटे उसकी अर्थी को कंधा देते हैं। मगर, यह कविता एक संकेत यह भी छोड़ती है कि बेटी की समस्या का समाधान तो हुआ नहीं! क्या सोनचिरई पति और पुत्रों को पाने के बाद भूल गई होगी कि उसकी मां और धरती मां ने उसके साथ क्या बर्ताव किया था ! स्त्री हो या पुरुष, उसे चौतरफा जीवन चाहिए। सोनचिरई कविता स्त्री के जीवन के 'एक तरफ' के सूनेपन को भी 'अंडरकरेंट' की तरह अपने में समाहित किए हुए हैं। और यह 'एक तरफ' बेटी का पक्ष है।

स्त्री विमर्श के कई पक्ष है। जिनमें से एक पक्ष बेटियों का भी है। इस पर साहित्य की दुनिया में चर्चा कम होती है। यह कहा जा सकता है कि बेटी का पक्ष, स्त्री का ही पक्ष है, इसीलिए स्त्री की चिंता में ही बेटी की चिंता को भी शामिल मान लेना चाहिए। मगर एक बात का ख्याल रखना चाहिए कि स्त्री की तुलना में बेटी के प्रति संवेदनात्मक गहराई ज्यादा होती है। स्त्री की चिंता करनेवाली भाषा में बेटी की चिंता करती हुई कविता ज्यादा मर्मस्पर्शी होती है। जितेन्द्र श्रीवास्तव की बेटी केंद्रित कविताएं संभव है कि हिंदी कविता में स्त्री विमर्श के एक नए आयाम को विस्तार दे।

ये कविताएं स्त्री विमर्श के लिए एक नए द्वार का उद्घाटन करती है। बेटी के लिए रची गई काव्य भाषा में संवेदना का एक नया तथा गहरारूप हमारे सामने आता है। स्त्री विमर्श की भाषा के विभिन्न रूपों में जेंडर आधारित बहसों को प्रधानता मिलती रही है। मगर बेटी

केंद्रित इन कविताओं में स्त्री के प्रति आत्मीय और निश्छल भाषा का जो प्रयोग हुआ है। उसकी बुनियाद मनुष्यता की जमीन पर तैयार की गई है। यदि हिंदी कविता में बेटी को विषय के रूप में सच्चे मन से अपनाया जाए तो पूरी संभावना है कि स्त्री विमर्श की सर्वाधिक आत्मीय और मानवीय भाषा हमारे सामने होगी। इस भाषा को पुरुष भी रच पाएगा और स्त्री भी। इस बात की आश्वस्ति लगती है कि पुरुषों के द्वारा रची गई इस भाषा में स्त्री के प्रति कुंठाओ के लिए कोई जगह नहीं होगी। आशा की जा सकती है कि जितेन्द्र श्रीवास्तव की ऐसी कविताएं लंबे समय तक अच्छी कविताओं के रूप में याद की जाती रहेगी। जैसे निराला और अनामिका की बेटी केंद्रीय कविताएं याद की जाती है।

षष्ठ अध्याय

"जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री विषय कविताओं की भाषा और उसका शिल्प"

सामान्य रूप से काव्य भाषा को लेकर यह मान्यता रही है कि काव्य भाषा, सामान्य भाषा से अलग होती है। काव्य भाषा सामान्य भाषा की तुलना में सुसंस्कृत, परिमार्जित, स्वच्छंद और लचीली तथा जीवंत और प्रभावी होती है। अनुभूति को संप्रेषणीय बनाने के लिए कवि भाषा के नए–नए प्रयोग भी करता है। कवि के लिए आवश्यक तत्व है– संप्रेषणीयता। इस उद्देश्य के लिए वह सामान्य भाषा से काव्य भाषा को विचलित कर देता है। शब्द के स्तर पर उपलब्ध अनेक विकल्पों में से वह ऐसे विकल्प का चयन करता है, जो उसकी अनुभूति को सहजता से व्यक्त करने में समर्थ होता है। काव्य भाषा में चित्रोपम तथा बिम्ब विधायिनी शक्ति भी होती है। सफल कवि वह है, जो दृश्य का इस प्रकार वर्णन करें कि पाठकों की कल्पना के समक्ष उसका चित्र उपस्थित हो जाए। काव्य

भाषा में कोमलता, सुकुमारता तथा नाद–सौंदर्य विद्यमान होता है, साथ ही उसमें रसानुकूल वर्ण–योजना भी की जाती है।

भारतीय साहित्य में आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल में अपने–अपने परिवेश के अनुसार अपनी–अपनी भाषा में कवियों ने कविताओं का सृजन किया है। जैसे आदिकाल में काव्य की भाषा डिंगल और पिंगल रही। मध्यकाल में काव्य की भाषा ब्रज और अवधी रही। उसी प्रकार आधुनिक काल में काव्य की भाषा खड़ी बोली हिंदी रही है। आज आधुनिक काल में साहित्य के कई कवि अपनी बात को जन भाषा में ही कहना उचित मानते हैं। क्योंकि उसमें स्वाभाविक अभिव्यक्ति हो सकती है। जितेन्द्र श्रीवास्तव एक ऐसे कवि हैं जो अपनी कविताओं में जन भाषा का उपयोग करते हैं। जितेन्द्र श्रीवास्तव गोरखपुर के रहने वाले है इस कारण उन्होंने भोजपुरी में भी साहित्य का सृजन किया है और हिंदी में भी। एक कवि के लिए कविता में जन भाषा का उपयोग नितांत आवश्यक है क्योंकि उसी भाषा में वह अपने भावों को और आम जनता के भावों को सहजता से अभिव्यक्त कर सकता है।

ऐसा कवि को जो गरीब किसान, मजदूर और निम्न मध्यमवर्गीय जनसमूह तथा स्त्री की पीड़ा को अपनी रचनाओं के केंद्र में रखता है, एक स्वस्थ मानवीय जीवन जीने के उनके उत्साह को सशक्त रूप में व्यक्त करता है। उन्हें शोषित–पीड़ित रखने वाली व्यवस्था के असली स्वरूप को उनके सामने नग्न करता है, उनके भ्रमों को तोड़कर तथा उनके साहस को जगाकर उन्हें सामूहिक संघर्ष में जुट जाने के लिए तैयार करता है, इस दृष्टि से जितेन्द्र श्रीवास्तव अपनी कविताओं के माध्यम से एक जनवादी कवि सिद्ध होते हैं।

एक कवि को जन भाषा का सहारा लेने की इसीलिए जरूरत पड़ती है कि वह अपनी बात को उन लोगों तक पहुंचाना चाहता है जिनका साहित्य से बहुत थोड़ा संपर्क होता है। यदि एक लेखक चाहता है कि गरीब तथा कम पढ़े लिखे लोग उसकी रचनाओं को पढ़कर या सुनकर उनसे प्रभावित हो सके तो उसे उनके मुहावरे को अपनाना होगा तथा साहित्यिक भाषा की उस परंपरा को तोड़ना होगा। जिसके अनुसार साहित्य कुछ गिने-चुने लोगों को रसविभोर करने की वस्तु बनकर रह जाता है। विशेषकर उन कविताओं में जो किसी न किसी आंदोलन के समय किसान, मजदूर और स्त्री को संबोधित करके लिखी जाती है। कवि को यह कोशिश करनी होगी कि वह अपनी बात को बहुत ही सुलझे हुए और सरल ढंग से कहे और लोक में प्रचलित मुहावरे, लोकोक्तियो तथा लोक कथाओं का सहारा ले। इस प्रकार की रचनाओं का एक निश्चित उद्देश्य होता है। यहां कवि किसी स्थिति का अन्वेषण तथा सूक्ष्म विश्लेषण नहीं कर रहा होता। परंतु वास्तव में यहां कुछ ऐसे ठोस निष्कर्षों को तथ्यों को, सत्य को, वास्तविकता को जनता के सामने रखना चाहता है। जिन्हें वह स्वयं पूर्ण विश्वास के साथ प्रतिपादित करता है और उन्हें जनता भी सहजता से समझ सकती है। क्योंकि वह उसके अपने आधारभूत अनुभवो की कसक लिए हुए होती हैं। इस प्रकार की रचनाएं वास्तव में तत्कालीन आंदोलन में संघर्ष का एक हथियार बन जाती है। इस प्रकार की अच्छी जनवादी रचनाओं के लिए जरूरी है कि कवि का भावबोध और चिंतन पूर्णतया जनवादी रूप धारण कर चुका हो और उनकी निम्न मध्यमवर्गीय निजबध्धता, संशयात्मकता आदि संघर्ष के ताप के कारण मिट चुकी हो। नागार्जुन जैसे कवि ने इस प्रकार की कई अच्छी रचनाएं लिखी है। इधर जनवादी और समकालीन कवियों ने अपनी

भाषा में स्त्रियों की वेदना और सर्वहारा की चेतनाओ को प्रखर बनाने वाले तथा संघर्षरत जनता में जोश भरने वाली कुछ अच्छी कविताएं लिखी है। वास्तव में आज की स्थिति में इस प्रकार की रचनाओं की बहुत जरूरत है। इनका विशेष साहित्यिक मूल्य तो होता ही है परंतु उनकी मुख्य सार्थकता उनके तात्कालिक प्रभाव में देखी जानी चाहिए। समकालीन कवि जैसे कि केदारनाथ सिंह, नागार्जुन, धूमिल, जितेन्द्र श्रीवास्तव, अनामिका, अनुराधा सिंह आदि की काव्य रचना और भाषा में उपर्युक्त विशेषताएं मिलती है।

सीधी–सरल और सहज भाषा में आम जनता तक अपनी बात पहुंचा सकने के अलावा एक कवि को जन भाषा का इसीलिए भी सहारा लेना होता है कि इससे वह स्वयं भावात्मक धरातल पर जनता के बहुत करीब आ जाता है। मेहनतकश जनता की परिस्थितियों के साथ जुड़ने की प्रक्रिया का यह एक आवश्यक अंग है कि यह उनके सोचने–समझने और महसूस करने के माध्यम को भी अपना ले। कोई मनुष्य केवल गरीब लोगों की भाषा को सीख लेने मात्र से उनका अपना नहीं हो जाता। दरअसल सही प्रकार की भावात्मकता के लिए यह जरूरी है कि रचनाकार अपनी नियति को मेहनतकश जनता की नियति के साथ पूर्णतया जोड़ दें तथा अपने वास्तविक जीवन में उनकी समस्याओं और संघर्षों में भागीदार हो। इस प्रकार का निर्णय लेने के बाद मेहनतकश जनता की भाषा को अपनाना उनके साथ जुड़े होने का एक अच्छा चिन्ह होगा। इस प्रकार की स्थिति में कवि का जनवादी स्वर अधिक प्रामाणिक लगेगा। इसलिए जब कभी कवि को मजदूरों, किसानों और स्त्री के जीवन का चित्रण करना हो तो उसे शिक्षित तबकों की भाषा की परिधि से बाहर निकल कर,जहां कहीं आवश्यक है, क्षेत्रीय बोलियों के शब्दों का प्रयोग भी कर लेना चाहिए।

विशेषकर उस समय जब किसान, मजदूर और स्त्री जीवन को भी प्रस्तुत किया जा रहा हो। ऐसे पात्रों के भावों और विचारों को उनकी अपनी भाषा में रखने से कविता में सजीवता आ जाती है। इसके साथ ही उनकी ओर कवि की आत्मिक भावना भी लक्षित हो जाती है। ऐसी कविता को जब एक पाठक पड़ता है तब वह दूर से एक झलक भर देखे हुए लोग न रहकर जाने पहचाने लगते हैं। यह सब विशेषताएं जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में खासकर स्त्री संबंधित कविताओं में मिलती है।

कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की भाषा जन भाषा है। उन्होंने अपने सामाजिक जीवन में किसान, मजदूर और स्त्री जीवन को बखूबी रूप से महसूस किया है। कवि ने उन्हें जांच परखकर अपनी कविता में भावात्मक और कथात्मक रूप में सत्यनिष्ठा के साथ प्रस्तुत किया है। साथ ही उन्होंने लोग जीवन में प्रयुक्त मुहावरों, लोकोक्तियों तथा लोककथाओं का सहारा लिया है। विश्व के सभी महान कवियों में यह विशेष योग्यता रही है कि अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में अपने क्षेत्र की जनभाषा की संभावनाओं को पहचानते थे और लोक मुहावरों से संचित अर्थ वैभव को आत्मसात करके अपनी अभिव्यक्ति को जानदार बना सकने की क्षमता रखते थे। सामाजिक जीवन के कुछ जाने पहचाने किंतु आधारभूत पहलुओं को थोड़े शब्दों में मूर्त रूप में व्यक्त करने का सामर्थ्य जन भाषा में विशेष रूप में होता है। क्योंकि एक जनवादी लेखक का मुख्य उद्देश्य सामाजिक जीवन के आधारभूत तत्वों को अच्छी तरह समझना होता है। इसीलिए उन मुहावरों और सूक्तियों से बहुत मदद मिलेगी। जिनमें पीढ़ियों के अनुभव के निचोड़ को स्मरणीय रूप दे दिया जाता है। जो बात अक्सर किताबी भाषा में घुमा–फिरा कर तथा बहुत सारे शब्दों में कमजोर ढंग से कही

जाती है उसे कई बार जन भाषा के मुहावरों में कुछ नपे–तुले किंतु धारदार शब्दों में बड़े ही प्रभावशाली ढंग से कहा जा सकता है। कविता के संसार में आंचलिक शब्दों के प्रयोग की अनिवार्यता स्पष्ट दिखाई देनी चाहिए और उनके कारण पाठक का ध्यान कवि के कौशल की ओर नहीं परन्तु परिस्थिति की किसी मुख्य विशेषता की ओर जाना चाहिए।यही ही विशेषता रही है जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं की भी।

समकालीन कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव के स्त्री जीवन से संबंधित कई काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं जैसे कि अनभै–कथा, असुंदर-सुंदर, बिल्कुल तुम्हारी तरह, जितनी हंसी तुम्हारे होठों पर, स्त्रीयां कहीं भी बचा लेती है पुरुषों को और बेटियां जैसे काव्य संग्रह में कवि ने स्त्री जीवन से संबंधित कविताएं लिखी है। जिसमें निम्नवर्गीय और मेहनतकश स्त्रियों की पीड़ा, शोषण को खुद महसूस कर वाणी प्रदान की है। जितेन्द्र श्रीवास्तव स्त्री को पुरुष की नजर से नहीं बल्कि स्त्री की नजर से देखते हैं। जितेन्द्र श्रीवास्तव अपने बचपन में अपनी मां, नानी और बहनों के साथ रहे उन्होंने उनकी पीड़ा देखी, उनकी समस्या देखी तथा अपनी युवावस्था में अपने आसपास के माहौल में मेहनतकश स्त्रियां के दुख–दर्द को देखा और उन्होंने पाया कि स्त्रियां मूल रूप से बहुत इमानदार और मेहनतकश होती है और जीवटता रहती है उनमें। परिस्थिति कैसी भी हो जीवन में आर्थिक, सामाजिक लेकिन स्त्रियां कभी हार नहीं मानती। कवि स्त्री संबंधित कविताओं में स्त्रियों की पीड़ा को स्त्री की जगह खड़े होकर स्त्री की वाणी में अपनी कविताओं में अभिव्यक्त करते हैं। स्त्री के एक पक्ष बेटी पक्ष पर भी जितेन्द्र श्रीवास्तव ने कविताओं की रचना की है। पिछले 23 साल में 23 कविताएं बेटियों पर लिखी है। हिंदी साहित्य में आज तक इतनी ज्यादा कविता किसी

कवि ने बेटियों पर नहीं लिखी। जितेन्द्र श्रीवास्तव का बेटियों से संबंधित एक पूरा चयनित काव्य संग्रह का प्रकाशन हुआ है। जिसका नाम 'बेटीयां' है। जिसके संकलनकर्ता श्री कमलेश्वर वर्मा और उनकी पत्नी श्रीमती सुचिता वर्मा जी। इस चयनित काव्य संग्रह में कवि ने भावपूर्ण भाषा का उपयोग किया है। कवि ने अपने संग्रह में अपनी अभिव्यक्ति को भावपूर्ण भाषा में कथात्मकरूप से अभिव्यक्त किया है। जिसमें मानवीय और निश्छल भाषा की ताजगी देखी जा सकती है। वात्सल्य रस से परिपूर्ण यह कविताएं पढ़ने के बाद हम बेटियों की दुनिया में खो जाते हैं।

उपसंहार

कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव के 6 काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं– इन दिनों हाल-चाल, अनभै कथा, असुंदर-सुंदर, बिल्कुल तुम्हारी तरह, कायांतरण, जितनी हंसी तुम्हारे होठों पर। इसके अलावा उनके चयनित काव्य संग्रह भी प्रकाशित हुई है जैसे कि- कवि ने कहा, बेटियां, उजास, स्त्रियां कहीं भी बचा लेती है पुरुषों को, सूरज को अंगूठा, रक्तसा लाल एक फूल। इनकी कविताएं विविध भाषाओं जैसे अंग्रेजी, उर्दू, मराठी, उड़िया, पंजाबी में अनूदित है। इनकी आलोचनात्मक पुस्तके भी प्रकाशित हुई है– शब्दों में समय, आलोचना का मानुष मर्म, भारतीय समाज–राष्ट्रवाद और प्रेमचंद, सर्जक का स्वप्न, नए विमर्श और समकालीन कविता, उपन्यास की परिधि, रचना का जीव द्रव्य, कहानी का क्षितिज आदि। कवि को उनकी रचना के लिए अनेक सम्मान मिले हैं जैसे भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार, देवी शंकर अवस्थी सम्मान, कृति सम्मान, रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार, विजय देवनारायण शाही पुरस्कार, डॉ.रामविलास शर्मा आलोचना सम्मान, परंपरा ऋतुराज सम्मान, भारतीय

भाषा परिषद कोलकाता का युवा सम्मान आदि पुरस्कारों से सम्मानित किए जा चुके हैं। प्रो. जितेन्द्र श्रीवास्तव वर्तमान में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय में हिंदी के प्रोफेसर एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रभाग के निर्देशक है।

द्वितीय अध्याय जिसे मैंने चार विभागों में विभक्त किया है। 1.समकालीन स्त्री विमर्श के विविध आयाम 2.स्त्री विमर्श का भारतीय पक्ष। इसके अंतर्गत विमर्श का कोशगत अर्थ, विमर्श का पारिभाषिक अर्थ, स्त्री विमर्श: अर्थ, स्त्री विमर्श का इतिहास, भारतीय पक्ष में स्त्री विमर्श का इतिहास, प्रागैतिहासिक काल में स्त्री की स्थिति, वैदिक काल में स्त्री की स्थिति, उपनिषद काल में स्त्री की स्थिति, रामायण एवं महाभारत काल में स्त्री की स्थिति, मध्य युग में भारतीय नारी की स्थिति, आधुनिक युग में नारी की स्थिति, 3. स्त्री विमर्श का पाश्चात्य पक्ष 4. हिंदी साहित्य लेखन में स्त्री विमर्श की दशा एवं दिशा।

आज आधुनिक जीवन में अभिव्यक्ति के नए-नए आयामों और माध्यमों को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। लोक जीवन में और स्त्री जीवन में बहुत सारे परिवर्तन आज जाए हैं। जिन्हें कवि ने बड़ी ही सूक्ष्मता से अपनी कविताओं में रेखांकित किया है। स्त्री जीवन की स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति को सजीवता के साथ हमारे सम्मुख रखा है। आज की आधुनिक स्त्री अपने आसपास के वातावरण को समझ रही है। वातावरण में यदि किसी प्रकार की समस्याएं हैं तो उसका विरोध आज की शिक्षित तथा चेतना संपन्न स्त्री कर रही है।कवि जितेन्द्र की कविताओं में लोकजीवन और स्त्री जीवन संयुक्त रूप से एक दूसरे में घुले–मिले हैं। एक के बगैर दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मां, नानी, दादी, पत्नी, बेटियों के जीवन तथा सरोकारों को कवि जितेन्द्र ने

सजीवता और गरिमा के साथ अपनी कविता में चित्रित किया है। परिवार के रिश्तो से इतर समग्र लोक जीवन में व्याप्त स्त्री जीवन को भी कवि ने अस्मिता बोध के साथ सम्मुख रखा है। मानव जीवन की शुरुआत से मानव जीवन के सभ्यता के निरंतर विकास में स्त्री जीवन का अतुलनीय योगदान रहा है। भारतीय सामाजिक लोक में स्त्री के योगदान को भुला देना कवि को किसी भी स्तर पर स्वीकार्य नहीं है।

जितेन्द्र श्रीवास्तव की दांपत्य जीवन पर आधारित कविताएं दांपत्य जीवन को सफल बनाने के लिए एक औषधि का कार्य करती है। जिसे पढ़कर हर एक भारतीय दांपत्य जीवन को सही अर्थों में समझ पाएगा। वह समझ पाएगा की पति–पत्नी का संबंध केवल शारीरिक नहीं आत्मिक भी है, दांपत्य जीवन में एक दूसरे को समझना, एक दूसरे के मन के भाव को समझना, एक दूसरे को मान देना, सम्मान देना काफी जरूरी है। जितेन्द्र वास्तव ने अपनी कविता में अपनी पत्नी अपने बच्चों को अपने जीवन का प्राणवायु और अपने जीवन की उजास कहां है। दांपत्य जीवन को सुखी बनाने के अनेक गुण जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में है जिसे हर एक शादीशुदा पुरुष और महिला को पढ़ना चाहिए। जिसे पढ़कर अपने दांपत्य जीवन को सुखमय बनाया जा सकें।

समकालिन हिंदी कविता में निराला, सुभद्रा कुमारी चौहान, नागार्जुन और अनामिका आदि ने बेटियों से संबंधित सुंदर कविताएं लिखी है। इन कविताओं में कवियों की अग्रगामी चेतना का आभास मिलता है। कवियों ने अपनी चिंता और चेतना को संवेदना के धरातल पर चित्रित किया है। इस संदर्भ में जितेन्द्र की कविताओं का अवलोकन करना उचित होगा। खुशी है कि कवि के असुंदर-सुंदर, इन दिनों हाल चाल, कायांतरण आदि

कविता संग्रहों में बेटियों से संबंधित कविताएं तो है ही, अनभैकथा तथा सूरज को अंगूठा काव्य संग्रहों में भी बेहतरीन कविताएं संकलित है। बेटियों के बहाने कवि ने आत्मीयता की तलाश की है। साथ ही, कवि के जीवन अनुभव और समय, समाज के संदर्भ घुल मिलकर व्यापक तथा बहू आयाम रचने में उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं। ध्यातव्य है कि बेटियां केवल बेटियां नहीं है, यहां कवि की जीवनदायिनी शक्तियों के रूप में पाठकों के समक्ष उपस्थित होती है। ठीक इसी तरह पिता महज एक शब्द नहीं है। बिचारा नहीं है, ब्रह्मा है।

जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपने स्त्री संबंधित काव्य के अंतर्गत जिस भाषा और शिल्प की योजना की है वह प्रभावी हैं। कवि की भाषा स्त्री के दुख–दर्द को अच्छे से व्यक्त करती है। उनकी भाषा भावात्मक एवं कथात्मक हैं। उनके काव्य में स्त्री के प्रति आदरणीय और मानवीय भाषा का उपयोग हुआ है। बेटियों से संबंधित जितेन्द्र की जो कविताएं है उसमें वात्सल्य रस काफी प्रभावी है। परंपरागत प्रतीकों और बिंबो के साथ-साथ प्रत्येक वर्ग के नए प्रतीक कवि ने गढ़े हैं। सोनचिरई, रामदुलारी, परवीन बॉबी, पुकार, संजना तिवारी, रमिया जैसी कविताओं के स्त्री पात्र जो न केवल आज के समय में पाठकों की चेतना को सोचने के लिए मजबूर करते हैं किंतु आने वाली पीढ़ियों को भी प्रतीकात्मक रूप से प्रभावित करेंगे। स्त्री विमर्श की क्रांति को पल्लवित करने वाली उनकी कविताएं स्त्री विमर्श की क्रांति को आगे भी पल्लवित करती रहेगी।

<u>शोध प्रविधि:–</u>प्रस्तुत शोध प्रबंध में विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं साक्षात्कार शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। विवेचनात्मक और विश्लेषणात्मक शोध अनुसंधान में किसी विषय के सभी पक्षों को तोलकर एवं तथ्य और वास्तविकता को ध्यान में

रखते हुए विचार करने की प्रक्रिया को विवेचना या विश्लेषण कहां जाता है। सत्य–असत्य का विचार, तर्क–वितर्क, मीमांसा, अनुसंधान एवं परीक्षण विवेचना के मुख्य अंग है। जितेन्द्र श्रीवास्तव के स्त्री संबंधित काव्य संग्रह की कविताओ को पढ़कर मैंने प्रागैतिहासिक, वैदिक काल, उपनिषद काल, आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल में स्त्रियों की स्थिति के बारे में विवेचना की। भिन्न-भिन्न कालों में स्त्री की स्थिति एक सी नहीं रही। प्रागैतिहासिक काल में स्त्री की स्थिति अच्छी रही परंतु उसके बाद स्त्री की स्थिति पतन की ओर उन्मुक्त हुई। आधुनिक काल में स्त्री की स्थिति संतोषजनक कह सकते हैं। अगर सरकार और समाज एकजुट होकर स्त्रियों को अच्छी शिक्षा दें तो वह भी विकास के इस दौर में पुरुष के साथ देश के विकास में अपना योगदान अच्छी तरह दे सकती है।

साक्षात्कार शोध अनुसंधान में साक्षात्कार महत्वपूर्ण रहता है। जब शोधार्थी साहित्य के क्षेत्र में अनुसंधान करता है तब शोध से संबंधित साहित्य के रचयिता चाहे वह कवि हो, कहानीकार, उपन्यासकार, आलोचक, निबंधकार, कथाकार हो। उस साहित्यकार से मिलना जरूरी होता है। क्योंकि शोध क्षेत्र में आने वाली समस्याओं का समाधान उसी साहित्यकार से साक्षात्कार कर मिल सकता है। अगर हम किसी कवि की कविताओं पर शोध कर रहे हैं तब हमें किसी कविता का अर्थ पूर्ण रूप से समझ में न आए तो हम उसे कवि से वार्तालाप या साक्षात्कार करके कविता का अर्थ समझ सकते हैं। मैं कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविता पर शोध कार्य कर रहा हूं। जब भी मुझे शोध कार्य के क्षेत्र में कोई जानकारी हासिल करनी हो तब तब मैंने जितेन्द्र श्रीवास्तव जी को फोन करके

वार्तालाप किया कई बार व्हाट्सएप पर महत्वपूर्ण जानकारी हासिल की, उनके फेसबुक अकाउंट से भी मैंने उनके बार कई महत्वपूर्ण आलेख, कविताओं के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी हासिल की। मेरा Ph.D में रजिस्ट्रेशन होने के बाद दो बार कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव से रूबरू होने का मौका मिला। 2020 में हिंदी शिबिर काव्य गोष्ठी में कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव से मुलाकात हुई । बाद में 2023 में महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय बड़ौदा में एक मित्र के Ph.D वायवा में उनसे साक्षात्कार हुआ। तब उनकी स्त्री संबंधित काव्य संग्रह और कविताओं पर उनसे बात हुई। इन दोनों साक्षात्कार के जरिए मुझे अपने शोध कार्य में काफी मदद मिली।

<u>शोध प्रबंध का उद्देश्य:–</u>मेरे शोध प्रबंध का उद्देश्य कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की स्त्री संबंधित रचनाओं के द्वारा समकालीन समय में स्त्रियों की और बेटियों की स्थिति का विश्लेषण करना है। आज वर्तमान युग में समाज, देश और दुनिया में स्त्रियों और बेटियों की स्थिति को उजागर करना मेरे शोध प्रबंध का उद्देश्य है। सामान्य मनुष्य स्त्रियों और बेटियों के प्रति सहज सरल और संवेदनशील बने तथा उन्हें अपने पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक अधिकार मिले एवं शिक्षा, मान–सम्मान मिले। साहित्य में व्याप्त विचार, संवेदना तथा मनुष्य व समाज की समस्याओं को समझना और उसमें परिवर्तन लाने का प्रयास ही मेरे शोध कार्य का उद्देश्य है। यह अनुसंधान हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श के साथ-साथ उसके एक पक्ष बेटी पक्ष को भी विकसित करेगा। इसके साथ हिंदी साहित्य के अक्षय कोष को भी समृद्ध करेगा। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव को भी अपनी स्त्री संबंधित रचनाओं के लिए हिंदी साहित्य जगत और समाज

में अपनी रचनाओं के लिए प्रसिद्ध मिलेगी। आगे हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श पर अनुसंधान करने वाले छात्रों को भी यह मेरा शोध प्रबंध अच्छे से मार्गदर्शन करेगा।

<u>शोध प्रबंध की स्थापनाएं –:</u>

1. कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में आत्मनिर्भर नारी का चित्रण है जो अपनी इच्छाओं के अनुसार अपना जीवन जीना चाहती है और अपनी स्वतंत्रत अस्मिता को लेकर किसी भी प्रकार का समझौता नहीं करना चाहती। कवि की एक कविता है 'आभा चतुर्वेदी'। आभा चतुर्वेदी, आभा शर्मा होना चाहती थी लेकिन उसे बनना पड़ा आभा द्विवेदी। यह स्त्री की नियति है। पुरुषवादी समाज में उसकी इच्छा तथा आकांक्षाओं का कोई मूल्य नहीं वे अपने अनुसार स्वच्छंद और स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है वह भी अपने मनपसंद साथी के साथ जीना चाहती है। कविता की शुरुआत होती है आभा चतुर्वेदी के द्वारा 'कहो ना प्यार है' फिल्म का पोस्टर निहारते हुए। एक पुरुषवादी समाज में टॉकीज के बाहर खड़े होकर फिल्म का पोस्टर देखना उसका विद्रोही है। परंतु इस विद्रोह को जागृत होने में 4 वर्ष का समय लगा 4 वर्ष पूर्व मजबूर होकर आभा ने अपनी आंखों के आंसू से अपने काजल और सपने दोनों को धो दिए थे लेकिन आज वह अपने पिता, पति और घर–परिवार के बारे में नहीं बल्कि अपने बारे में बात करती है। आज वह आत्मनिर्भर, स्वतंत्र और अपनी इच्छाओं के अनुसार जीने वाली आभा है। मेरा मानना है कि स्त्री को अपने जीवन में अपनी इच्छा अनुसार शिक्षा एवं जीवनसाथी चुनने का पूरा अधिकार होना ही चाहिए। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपनी कविताओं के माध्यम से आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, स्वनिर्भर नारी का चित्रण किया है।

2. कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं में सफल दांपत्य जीवन का चित्रण हुआ है। उनकी कविताएं दांपत्य जीवन को सफल बनाने की औषधि है। कवि जितेन्द्र की दांपत्य जीवन पर आधारित कविताओं को पढ़ने के बाद हम यह कह सकत है कि वर्तमान समय में स्त्री को पति के रूप में एक मित्र चाहिए जो उसकी भावनाओं को समझे उसे प्यार करें और सम्मान दे। हिंदी साहित्य में केदारनाथ सिंह एक मात्र ऐसे कवि हुए जिन्होंने पहली बार पत्नी प्रेम पर काव्य संग्रह की रचना की 'मेरी हो तुम'। इस परंपरा को आगे बढ़ाने वाले हिंदी साहित्य में एक मात्र कवि है जितेन्द्र श्रीवास्तव। जिन्होंने पत्नी प्रेम पर दो काव्य संग्रह की रचना की है बिल्कुल तुम्हारी तरह, जितनी हंसी तुम्हारे होठों पर।

3. कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव बेटियों की शिक्षा और विवाह की बात को लेकर काफी चिंतित दिखते हैं अपनी कविताओं में। कवि ने अपनी कविताओं में स्त्री शिक्षा को भी अधिक महत्व दिया है। जो आज प्रासंगिक है। कवि की 'पुकार' नामक कविता स्त्री के जीवन में शिक्षा के महत्व को उजागर करती है। इस कविता में एक लड़की सुभागी का जीवन पूरी तरह से बर्बाद हो चुका है। सुभागी के सपनों की दीवार भहराकर गिर गई है। उसके सर से छप्पर उड़ गया है। 29 की उम्र में तीन-तीन बच्चों को गोद में लिए वह दुनिया और जीवन के चौराहे पर खड़ी है। सुभागी के पिता ने उसकी शादी एक ऐसे लड़के से कर दी है जो दिन रात दारु ठकोसता है। एक दिन दारू ने ठकोस लिया उसे। आज सुभागी और उसके बच्चों को देखने वाला कोई नहीं। वह किसी जगह पर मात्र ₹700 में मजदूरी करती है। ऐसी महंगाई के कठिन समय में मात्र ₹700 में चार-चार लोगों को खिलाना बड़ा कठिन काम है। घर का गुजारा करना बड़ा मुश्किल है। इस कविता में एक बात ध्यान देने योग्य है कि

शायद सुभागी ज्यादा पढ़ी-लिखी भी नहीं थीं। अगर वह पढ़ी-लिखी होती तो ₹700 की मजदूरी नहीं करती। इस कविता को पढ़ने के बाद में बस इतना कहना चाहता हूं कि बेटियों की शादी को लेकर ज्यादा हड़बड़ी नहीं करनी चाहिए। सोच समझकर अपनी बेटियों के विवाह को करना चाहिए। साथ ही उन्हें उचित शिक्षा भी देनी चाहिए। जिससे वह आत्मनिर्भर बन सके।

4. कवि की कविताओं में समाज की रूढ़िग्रस्त मान्यताओं के खिलाफ विद्रोही नारियों का चित्रण है। कवि की रामदुलारी और परवीन बॉबी कुछ इसी प्रकार की कविताएं है। परवीन बॉबी का संघर्ष जहां फिल्मी दुनिया से संबंधित है। तो दूसरी तरफ रामदुलारी जैसा पात्र ग्रामीण परिवेश की स्त्रियों के जीवन की चेतना को महत्व देता है। प्रत्येक समाज से कवि ने ऐसे स्त्री पात्र चुने है जो आने वाले समय में स्त्रियों को अपने पारिवारिक, सामाजिक अधिकारों को हासिल करने के लिए हिम्मत, आशा, शक्ति और प्रेरणा प्रदान करता रहेगा।

5. कवि जितेन्द्र ने स्त्री जीवन के एक पक्ष बेटी पक्ष पर भी अनेक कविताएं रची है। हिंदी साहित्य के पिछले 1000 वर्ष के इतिहास में कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव ही एक मात्र ऐसे कवि हुए जिन्होंने बेटियों को लेकर पिछले 23 वर्षों में 23 कविताएं लिखी है। इतनी ज्यादा संख्या में हिंदी साहित्य में किसी भी कवि ने इतनी मात्रा में बेटियों को लेकर कविताएं नहीं लिखी। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव स्त्री के प्रति जितने भावुक संवेदनशील और अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करते हैं। उससे भी ज्यादा बेटी केंद्रित कविताओं में जितेन्द्र श्रीवास्तव का बेटी के प्रति प्रेम और संवेदना की अभिव्यक्ति ज्यादा हुई है। इसी कारण बेटियों पर उनका एक पूरा चयनित काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ है। जिसका नाम है 'बेटियां'। जिसमें बेटियों

के प्रति मन को मोहित करनेवाली भाषा एवं बच्चों की दुनिया में मग्न कर देने वाला वात्सल्य रस का भरपूर प्रयोग किया है। जैसे कि “बेटियां नरम धूप की तरह/बनी रहती है सदा/पिता के संसार में/जितनी हंसी होती है बेटियों के अधर पर/उतनी उजास होती है पिता के जीवन में।”

6. कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव के स्त्री जीवन पर आधारित काव्य संग्रह जब मैंने पढ़े तब मैंने पाया कि स्त्री का बहू आयामी रूप उनके काव्य संसार से उभर कर आता है। उनके काव्य संसार में शहरी और ग्रामीण तमाम तरह की औरतें मौजूद है। उनके यहां घास गढ़ती, पहाड़ पर बोझा ढोती, ट्रेन में भीख मांगती, घर,पति और बच्चों को संभालती तथा ऑफिस का कामकाज करती तमाम तरह की औरत मौजूद है। जो हमें सामान्य रूप से हमारे आसपास या फिर हमारे घर में मां, बहन या पत्नी के रूप में भी काम करती हुई नजर आती है। जितेन्द्र श्रीवास्तव के काव्य संसार में श्रृंगार करती स्त्री से ज्यादा मेहनत और संघर्ष करती स्त्री ज्यादा सुंदर लगती है। घर परिवार को चलाने के लिए आज सामान्य स्त्री को घर संभालने के साथ-साथ घर के बाहर कामकाज के लिए जाना पड़ता है। जब भी वह अपने काम से घर लौटे बड़े ही प्यार से उनका स्वागत होना चाहिए। कभी-कभी देरी होने पर पिता या पति की आंखों में संदेह नहीं वह बस प्रेम देखना चाहती है। आज समाज में शंका ने कई घर परिवार को उजाड़ दिया है। परिवार को अच्छे से चलाने के लिए आज स्त्री अपना योगदान दे रही है। उसे शंका की नजर से न देख कर प्यार की नजर से देखना चाहिए। इसी बात का जिक्र उनकी कविताओं में बार-बार आता है।

7. कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कई कविताओं की भाषा कहानी जैसी है। उनकी कविताओं

को पढ़कर ऐसा लगता है कि उन्होंने अपने आस–पास घटित घटनाओं को देखकर उन्हें कविताओं का जामा पहना दिया हो और उसमें प्राण फूंक दिए हो। उनकी कविताओं की भाषा कथात्मक एवं वर्णनात्मक भी है। उनकी कविताओं को पढ़ते समय हमें कोई कहानी या फिर किसी घटना को पढ़ रहे हैं ऐसा प्रतीत होता है। 'सोनचिरई' कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की बहुत चर्चित कविताओं में से एक है। और यह कविता भी कहानी जैसा ही आभास कराती है। 'सोनचिरई' की शुरुआत लोक कहानियों की तरह होती है–"बहुत पुरानी कथा है/एक भरे पूरे घर में/एक लड़की थी सोनचिरई।"बचपन में दादा–दादी और नाना–नानी के द्वारा सुनाई गई कई कथाओं की शुरुआत भी कुछ इसी तरह से होती थी जैसे की 'बहुत पहले की बात है एक गांव में एक गरीब ब्राह्मण रहता था।' सोनचिरई की तरह जितेन्द्र श्रीवास्तव की अन्य कविताएं जैसे रमया, पुकार, रामदुलारी आदी आदि कविताएं कहानी जैसा आभास कराती है। इसलिए कह सकते हैं कि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं की भाषा कथात्मक एवं वर्णनात्मक भी है। उनकी कविताओं में कथात्मक का गुण मौजूद है। उनकी कविताओं को पढ़ते हुए मन में कहानी जैसा चित्र बनता है।

8. कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविताओं की भाषा रीतिकालीन काव्य की तरह चमत्कार उत्पन्न नहीं करती। उनकी भाषा तो सहज सरल बोधगम्य है। कवि अपनी बात को कबीर और तुलसीदास की तरह बहुत ही सहजता के साथ कहते हैं। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपने स्त्री संबंधित काव्य के अंतर्गत जिस भाषा और शिल्प की योजना की है वह काफी प्रभावी है। कवि की भाषा सहज सरल होने के साथ-साथ साहित्यिक भी है। कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव ने अपनी कविताओं में प्रसंग, क्षेत्र एवं विषय के अनुसार उचित शब्दों का चयन

किया है। साथ ही उन्होंने उर्दू फारसी अंग्रेजी शब्दावली का भी अपनी कविताओं में उपयोग किया है। कवि की स्त्री संबंधित भाषा स्त्री के दुख–दर्द को अच्छे से व्यक्त करती है। उनकी भाषा भावात्मक एवं कथात्मक है। उनके काव्य में स्त्री के प्रति आदरणीय और मानवीय भाषा का उपयोग हुआ है। बेटियों से संबंधित जितेन्द्र की जो कविताएं है उसमें वात्सल्य रस काफी प्रभावी है। परंपरागत प्रतीक और बिंबो के साथ-साथ प्रत्येक वर्ग के नए प्रतीक कवि ने गढ़े हैं। सोनचिरई, रामदुलारी, परवीन बॉबी, पुकार, संजना तिवारी, रमया जैसी कविताओं के स्त्री पात्र आज के समय में पाठकों की चेतना को सोचने के लिए मजबूर करते हैं साथ ही आने वाली पीढियां को भी प्रतीकात्मक रूप से प्रभावित करेंगे। जितेन्द्र श्रीवास्तव की कविता की भाषा सहस सरल और पढ़ते ही समझ में आ जाए ऐसी है। उनकी भाषा में अभिधा शब्द शक्ति निहित है। साथी लक्षणा एवं व्यंजना शब्द शक्ति की भी अभिव्यक्ति उनके काव्य में हुई है। उनकी काव्य भाषा में स्थानीय बोली एवं आंचलिक भाषा का भी प्रयोग हुआ है। उनके कविता संसार में परंपरागत एवं आधुनिक लोकोक्तियां, मुहावरों, प्रतीकों और बिंबो का प्रयोग हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधारभूत ग्रंथ:-

1. जितेन्द्र श्रीवास्तव, अनभै कथा, शिल्पायन पब्लिकेशन एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, संस्करण 2006
2. जितेन्द्र श्रीवास्तव, असुंदर-सुंदर, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2008
3. जितेन्द्र श्रीवास्तव, इन दोनों हाल-चाल, यश पब्लिकेशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011
4. जितेन्द्र श्रीवास्तव, बिल्कुल तुम्हारी तरह, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011
5. जितेन्द्र श्रीवास्तव, कायांतरण, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2012
6. जितेन्द्र श्रीवास्तव, कवि ने कहा, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016
7. जितेन्द्र श्रीवास्तव, उजास, सेतु प्रकाशन, नोएडा, उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण 2019
8. जितेन्द्र श्रीवास्तव, सूरज को अंगूठा, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2020
9. जितेन्द्र श्रीवास्तव, स्त्रियां कहीं भी बचा लेती है पुरुषों को, प्रलेख प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, ठाणे, महाराष्ट्र, पहला संस्करण 2021

10. जितेन्द्र श्रीवास्तव, कविता का घनत्व, सेतु प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2021
11. जितेन्द्र श्रीवास्तव, जितनी हंसी तुम्हारे होठों पर, सेतु प्रकाशन, नोएडा, उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण 2022
12. जितेन्द्र श्रीवास्तव, रक्त–सा एक फुल, आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल, प्रथम संस्करण 2022

सहायक ग्रंथ:-

1. संपादक–अरुण होता, सृजन का आयतन, यश पब्लिकेशन, दिल्ली संस्करण 2015
2. मृत्युंजय पांडे,कवि जितेन्द्र श्रीवास्तव, कल्पना प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017
3. संपादक– कमलेश्वर वर्मा एवं सुचिता वर्मा, बेटियां, के के पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2019
4. डॉ.चैनसिंह मीणा, कवि का विश्व, कलमकार पब्लिशर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2021
5. अरुण होता, जितेन्द्र श्रीवास्तव एक शिनाख्त, प्रलेख प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण 2022
6. कवि के रूप, बाबू गुलाबराय, आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1950

7. आचार्य नगेंद्र– रस सिद्धांत, नेशनल पब्लिशर्स, दिल्ली, संस्करण 2019
8. कविता का समकालीन प्रमेय, संपादक–अरुण होता, नेशनल पब्लिशिंग हाउस जयपुर एंड दिल्ली, प्रथम संस्कृत 2015
9. उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, बिहार राष्टभाषा परिसद, बिहार, संस्करण 2010
10. रांगेज राघव– कब तक पुकारू, राजपाल एंड सन्स, दिल्ली, संस्करण 2014
11. हिंदी विश्वकोश, भाग– 2, नागेंद्र नाथ बसु, मित्रा विश्वकोश प्रेस, कलकत्ता, संस्करण 1911
12. हिंदी शब्द सागर– संपादक- रामचंद्र वर्मा, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, संस्करण 1922-1929
13. लोकभारतीय प्रामाणिक हिंदी कोश– आचार्य रामचंद्र वर्मा, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, संस्करण 1949
14. केदारनाथ सिंह– तीसरा सप्तक (स.अज्ञेय), जनपद वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2023
15. मानवी की पारिभाषिक कोश– डॉ.नागेंद्र, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, संस्करण 1986
16. हिंदी साहित्य: वैचारिक पृष्ठभूमि डॉक्टर लालचंद गुप्त 'मंगल' लेख: प्रोफेसर रोहिणी अग्रवाल–स्त्री विमर्श और हिंदी साहित्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2011

17. हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली– डॉ.अमरनाथ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2011

18. प्रभा खेतान– अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य, हंस, अंक-3 मार्च, 2001

19. तस्लीमा नसरीन–औरत का कोई देश नहीं, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2008

20. औरत कल, आज और कल– आशा रानी व्होरा, कल्याणी शिक्षा परिसद, दिल्ली, संस्करण 2011

21. ईश्वरचंद विद्यासागर–हिरण्यमय बनर्जी,साहित्य अकादमी, दिल्ली, संस्करण 1971

22. मेरे सपनों का भारत– मोहनदास करमचंद गांधी, राजपाल एंड सन्स, दिल्ली, संस्करण 2014

23. राजकिशोर– क्या यह नारीवाद के अवसान का समय है,जनसत्ता, संपादक-प्रभास जोशी, 30 जून, संस्करण 1998

24. सरला माहेश्वरी– नारी प्रश्न, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2007

25. स्त्री उपेक्षिता, सिमोन द बोउआर, प्रस्तुत डॉ.प्रभा खेतान, दिल्ली पॉकेट बुक्स, दिल्ली, संस्करण 2002

26. हरिदत्त वेदालंकार– हिंदू परिवार मीमांसा, बंगाल हिन्दी मण्डल, कलकत्ता, संस्करण 2011

27. आचार्य डॉ.नगेन्द्र, रस सिद्धांत, नेशनल प्रकाशन, दिल्ली, 2019

पत्र-पत्रिकाएं:-

1. जनसंदेश टाइम्स; डॉ.भानुप्रताप सिंह लखनऊ, 25 मार्च 2019
2. मार्गरेट वेस्टर्न:विशेषांक 'वसुधा',संपादक- अरविन्द जैन तथा लीलाधर मंडलोई वाणी प्रकाशन, दिल्ली, (अंक-59-60), 2003-2004
3. डॉ हजारी प्रसाद द्विवेदी, संपादक- अनंत कुमार सिंह आरा, बिहार,जनपद, वर्ष–१, अंक–१,
4. असुविधा (समकालीन कविता की देहरी); महेश पुनीता,जीवन के सपनों और उजास भरी आंखों के कवि:जितेन्द्र श्रीवास्तव,24 दिसंबर, 2014

अंग्रेजी ग्रंथ:-

1. Oxford dictionary and thesaurus. New Delhi, Oxford University press edition 2001

वेबसाइट:-

1. Pahleebar blogspot.com> 2020/11, डॉक्टर चैनसिंह मीणा की जितेन्द्र श्रीवास्तव से बातचीत
2. Streekal.com
3. WWW.facebook.com/Jitendra Srivastava